Oct
2023

बेअसत–ए–नबवी (स०अ०व०)

“क़दीम सीरत निगार इस (बेअसत–ए–नबवी (स०अ०व०) को अपनी ज़बान–ए–ख़ास में यूं बयान करते हैं कि किसरा शाहे ईरान के महल में कंगरे गिरे और आतिशे फ़ारस एकदम बुझ गई। ज़माना हाल इसको इस तरह बयान करेगा कि इन्सानियत की इस अन्दरूनी हरकत से उसकी बैरूनी सतह में इज़्तिराब पैदा हुआ, उसकी साकिन व बेहरकत सतह पर जितने कमज़ोर और बोदे क़िले बने हुए थे, उनमें ज़लज़ला आया, मकड़ी का हर जाला टूटता और तिनकों का हर घोंसला बिखरता नज़र आता। ज़मीन की अन्दरूनी हरकत से अगर संगीन इमारतें और आहनी बुर्ज व ख़ज़ां के पत्तों की तरह झड़ सकते हैं तो पैग़म्बर की आमद–आमद से किसरा व क़ैसर के ख़ुदसाख़्ता निज़ामों में तज़लजुल क्यों न होगा? ज़िन्दगी का यह गर्म ख़ून जो इन्सानियत के सर्द जिस्म में दौड़ा मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह (स०अ०व०) की बेअसत का वाक़या है जो मुतमद्दिन दुनिया के क़ल्ब मक्का मुअज़्ज़मा में पेश आया।” (कारवाने मदीना: २३–३३)

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

मासिक

रायबरेली

अरफ़ात किरण

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

माह-ए-रबीउल अव्वल का पैग़ाम

"माहे रबीउल अव्वल की याद में हमारे लिए जश्न व मसर्रत का पैग़ाम इसलिए था कि इस महीने में ख़ुदा का वह फ़रमाने रहमत दुनिया में आया जिसके ज़हूर ने दुनिया की शक़ावत व हरमानी का मौसम बदल दिया। ज़ुल्म व तुग्यान और फ़साद व असियान की तारीकियां मिट गईं। ख़ुदा और उसके बन्दों का टूटा हुआ रिश्ता जुड़ गया। इन्सानी अख़्वत व मसावात की यगानगत ने दुश्मनियों और कीनों को नाबूद कर दिया और कलिमा-ए-कुफ़्र व ज़लालत की जगह कलिमा-ए-हक़ व अदालत की बादशाहत का ऐलान आम हुआ:

"अल्लाह की तरफ़ से तुम्हारी जानिब एक नूरे हिदायत और किताबे मुबीन आई, अल्लाह इसके ज़रिये अपनी रज़ा चाहने वालों को सलामती और ज़िन्दगी की राहों पर हिदायत करता और उनके आगे सिराते मुस्तक़ीम खोलता है।" (सूरह माइदा: १५-१६)

लेकिन दुनिया शक़ावत व हरमानी के दर्द से फिर दुखिया हो गई। इन्सानी शर व फ़साद और ज़ुल्म व तुग्यान की तारीकी ख़ुदा की रोशनी पर ग़ालिब होने के लिए फैल गई, सच्चाई और रास्तबाज़ी की खेतियों ने पामाली पाई और इन्सानों के बेराह गिले का कोई रखवाला न रहा। ख़ुदा की वह ज़मीन जो सिर्फ़ ख़ुदा ही के लिए थी, ग़ैरों को दे दी गई और इसके कलिमा-ए-हक़ व अद्ल के ग़मगुसारों और साथियों से उसकी सतह ख़ाली हो गई:

"ज़मीन की ख़ुश्की और तरी दोनों में इन्सान की पैदा की हुई शरारतों से फ़साद फैल गया और ज़मीन की सलाह व फ़लाह ग़ारत हो गई।" (सूरह रोम: ४१)

फिर आह! तुम उसके आने की ख़ुशियां तो मनाते हो मगर उसके ज़हूर के मक़सद से ग़ाफ़िल हो गए और वह जिस ग़र्ज़ के लिए आया था, उसके लिए तुम्हारे अन्दर कोई टीस और चुभन नहीं?!"

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद (रह०)

(विलादत-ए-नबवी स०अ०व०: 49-50)

بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक : 10 | अक्टूबर 2023 ई० | वर्ष : 15

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ॉ नदवी

मुद्रक

मो० हसन नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

रहमतुल-लिल-आलमीन (स०अ०व०)

अल्लाह के रसूल
(सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम)
ने फ़रमाया:

"बिलाशुब्हा मुझे लानत करने वाला बनाकर नहीं भेजा गया बल्कि यक़ीनन मुझे सरापा रहमत बनाकर भेजा गया है।"

सही मुस्लिम: 6613

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी0.229001

प्रति अंक 15रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खॉ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू0

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

ऐ हिलाल-ओ-बद्र तू ...

मौलाना मुहम्मद सानी हसनी (रह0)

ऐ हिलाल-ओ-बद्र तू क़ाबिल है मेरे यार के
तूने देखा रू-ए-अनवर को मेरे सरकार के

एक झलक से रू-ए-अनवर की बना तू माह-ए-नौ
नूर बढ़ता ही गया दीदार से हर बार के

सारे आलम को मिली है जो भी दौलत हुस्न की
यह करिश्मे हैं जमाले रू-ए-पुर अनवार के

इस सरापा हुस्न की यादों से है सरशाद दिल
हो तसद्दि दक़ सारा आलम इस दिले सरशार के

जो भी हो सरशार पीकर बादा-ए-इश्के नबी (स0अ0व0)
मयकदे का मयकदा क़ुर्बान उस मय ख़्वार के

इश्के महबबे खुदा (स0अ0व0) से जो भी दिल बेदार हो
आलमे बेदार सदक़े उस दिले बेदार के

नाज़ है हमको कि है एक निस्बत आप (स0अ0व0) से
गरचे हैं मारे हुए हम ज़िल्लते इदबार के

जिसमें आई आप (स0अ0व0) के दस से बहार अन्दर बहार
हम गुलतर हैं उसी एक गुलशने बेख़ार के

इस अंक में:

जो दिलों को फ़तेह कर ले.....3
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सीरत-ए-मुहम्मदी (स0अ0व0) का पैग़ाम.....4
हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0)

मुहब्बत-ए-रसूल (स0अ0व0) का तक़ाज़ा.....6
हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

उस्वा-ए-हसना.....7
मौलाना मुफ़्ती तक़ी उस्मानी

तक़वा क्या है?.....8
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

निकाह के चन्द मसाएल 10
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

ज़ाहिर परस्तों से ख़िताब.....12
अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

अक़्ल व दानिश से अपील.....13
हज़रत मौलाना मुहम्मद यूसुफ़ लुधयानवी (रह0)

सहाबा किराम (रज़ि0) की मुहब्बत.....14
मौलाना सैय्यद महमूद हसन हसनी नदवी (रह0)

दुनिया की हक़ीक़त-रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की निगाह में.....16
मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

सहाबा किराम (रज़ि0) की मुहब्बत.....14
मौलाना सैय्यद महमूद हसन हसनी नदवी (रह0)

मौलाना अली मियाँ नदवी (रह0) और फ़िक्र-ए-वतन.....17
मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

सम्पादकीय

जो दिलों को फ़तेह कर ले....

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

शायद ग़लती हमसे हो रही है, अल्लाह ने जो मौक़ा हम मुसलमानों को दिया इस्लाम की तस्वीर पेश करने का, लोगों के सामने उसके निज़ामे ज़िन्दगी को रखने का, उसकी अख़लाक़ी तस्वीर को अपनी ज़िन्दगी के ज़रिये तमाम लोगों तक पहुंचाने का, वह काम हमसे न हो सका। इसकी इन्फ़िरादी मिसालें बहुत मिल जाएंगी लेकिन इज्तिमाई सतह पर इसकी तस्वीर ढूंढने से मिलना मुश्किल है।

वह दुनिया जो अख़लाक़ी दीवालियापन का शिकार है, इन्सानियत के जौहर से ख़ाली है, जो मुहब्बत व इन्सानियत की प्यासी है, आज उसके दर्द का दरमा कहां है? वह कहां जाए और अपनी प्यास बुझाए, अपने दर्दे लादवा का इलाज करा सके। जो आबे हयात क़ौमे मुस्लिम को मिला, ज़िन्दगी की डोर सुलझाने का फ़न जो उसके हाथ आया, अख़लाक़ व इन्सानियत के उसूल व ज़वाबित जो उसे बताए गए वह कहां है? अफ़सोस है कि हमने अपने घर की नेमत ठुकराई, दूसरों को क्या देते हमने ख़ुद उससे पहलूतही की, हम ख़ुद अपनी ज़िन्दगी की गुत्थियों को सुलझा न सके, अपने मसाएल को हल न कर सके। हम क्या नमूना बनते, नमूना बनने वाले बनकर दिखला गए। अख़लाक़ व ईमान के जौहर उनकी ज़िन्दगी की पहचान बन गए उनको देखने वाले उन पर जान देने को तैयार हो गए, दुनिया में उनके अख़लाक़ का डंका बजा और उन्होंने दुनिया को वह आबे हयात तक़सीम किया कि उसको पीकर दुनिया अमन व शांति और मुहब्बत व मारिफ़त का गुलिस्तां बन गई। एक कमज़ोर औरत "ऐ मोअतसिम" का नारा लगाती है और ख़लीफ़ा–ए–वक़्त उसकी मदद के लिए तैयार है।

इसी पैग़ामे मुहब्बत व मसावात की दुनिया आज प्यासी है। आदमी को भूख में खाना न मिले, वह पागल हो जाता है, वह काटने के लिए दौड़ता है, आप उसकी ज़रूरत पूरी करके देखिए वह कैसा राम होता है। अफ़सोस है कि जानवरों की दुनिया में इन्सानों की बात करने वाले कम हो गए, लोगों का दर्द समझने वाले नज़र नहीं आते।

यह ज़िम्मेदारी किसकी थी? जिसके पास पिलाने के लिए पानी मौजूद हो, न वह ख़ुद पिये और तड़पता रहे और न दूसरों को पिलाए, ग़लती का सिरा क्या है इस पर ग़ौर करने की ज़रूरत है?

दुनिया इस वक़्त "लोगों के हाथों की कमाई है कि ख़ुश्की और तरी में बिगाड़ फैल गया है" की तस्वीर बनी हुई है। अपने हाथों हमने तबाही के रास्ते बनाए, फ़िज़ा को आलूदा किया, दिमाग़ों को मसमूम किया, दिलों को पत्थर बना दिया, बन्दों का रिश्ता रब से क़ायम न रहा, वह दुनिया के अंधेरों में भटकने लगे, इसके बाद क्या है?! अगर अब भी हम न जागे और अपनी ज़िम्मेदारियों का एहसास हमारे अन्दर बेदार न हुआ तो न जाने बात कहां से कहां पहुंच जाएगी।

माहे रबीउल अव्वल भी हमें यह पैग़ाम देता है जिसमें रहमतुल लिल आलमीन (स0अ0व0) दीने रहमत लेकर इस दुनिया में तश्रीफ़ लाए। वह दुनिया जो जहन्नम कदा बनी हुई थी, वह गुलज़ार बन गई, लोगों को ज़िन्दगी का सिरा मिला, हयाते नौ का पयाम मिला, दुनिया में बहार आयी, आज ज़रूरत फिर इसी हयाते नौ की है, मुर्दा दिलों में जान डालने की है, और फिर दोबारा उसी ईमान व अख़लाक़ के साथ मैदाने अमल में आने की है जिसके ज़रिये से दुनिया ने बार–बार मुहब्बत के जाम पिये।

जो दिलों को फ़तेह कर ले वही फ़ातेह–ए–ज़माना

सीरत-ए-मुहम्मदी (स0अ0व0) का पैग़ाम

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0)

सब जानते हैं कि जिस वक़्त रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की बेअसत हुई, दुनिया कुछ वीरान और क़ब्रिस्तान न थीं ज़िन्दगी का चक्कर जिस तरह इस वक़्त चल रहा है, बहुत थोड़े से फ़र्क़ के साथ उस वक़्त भी चल रहा था। सारे कारोबार आज की तरह हो रहे थे। तिजारत भी थी, ज़राअत भी थी और हुकूमतों का निज़ाम चलाने वाले और उनकी मिशनरी में फिट होने वाले भी मौजूद थे। उस वक़्त की दुनिया के लोग उस ज़िन्दगी पर बिल्कुल क़ानेअ और मुतमईन थे और उनको इसमें किसी तरमीम या इस्लाह या तब्दीली की ज़रूरत महसूस नहीं होती थी। लेकिन अल्लाह तआला को अपनी ज़मीन का नक़्शा और दुनिया की यह हालत बिल्कुल पसंद न थी, हदीस में उस ज़माने के बारे में आता है कि "अल्लाह तआला ने अहले ज़मीन पर नज़र डाली, उसने रूए ज़मीन के तमाम बाशिन्दों क्या अरब, क्या अजम सबको बेहद नापंसद फ़रमाया और वह उनसे बेज़ार हुआ, सिवाए अहले किताब के चन्द अफ़राद के।" ऐसी हालत में अल्लाह तआला ने हज़रत मुहम्मद (स0अ0व0) को मबऊस फ़रमाया (भेजा) और आप (स0अ0व0) के साथ एक पूरी क़ौम के ज़हूर का सामान किया। ज़ाहिर है कि उनको किसी ऐसे मक़सद के लिए पैदा किया था जो दूसरी क़ौमों से पूरा नहीं हो रहा था। जो काम वह सब पूरे शौक व इन्हिमाक से अंजाम दे रहे थे, उसके लिए ज़ाहिर है कि किसी नई उम्मत को पैदा करने की ज़रूरत न थी और इन्सानी ज़िन्दगी के इस पुरसुकून समन्दर में इस नए तलातुम की हाजत न थी, जो मुसलमानों के वजूद से ज़हूर में आया और जिसने ज़मीन में एक ज़लज़ला डाल दिया। अल्लाह तआला ने जब हज़रत आदम (अलैहिस्सलाम) को पैदा किया तो फ़रिश्तों ने अर्ज़ किया कि तस्बीह व तक़दीस के लिए हम नियाज़मन्द बहुत काफ़ी हैं, इसके लिए इस ख़ाकी पुतले को पैदा करने की ज़रूरत समझ में नहीं आयी। तो अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि मैं वह जानता हूं जिसका इल्म तुम्हें नहीं और आगे चलकर वाज़ेह कर दिया कि आदम (अलैहिस्सलाम) इसी काम के लिए पैदा नहीं हुए जो मलाएका अंजाम दे रहे हैं, उनसे ख़ुदा को कुछ और काम लेना है।

अगर मुसलमान सिर्फ़ तिजारत के लिए पैदा किये जा रहे थे तो मक्का के उन ताजिरों को जो शाम व यमन का तिजारती सफ़र किया करते थे और मदीना के उन बड़े-बड़े यहूदी सौदागरों को जिनके बड़े-बड़े गढ़ बने हुए थे, यह पूछने का हक़ था कि इस ख़िदमत के लिए हम गुनाहगार क्या कम हैं कि इसके लिए एक नई उम्मत पैदा की जा रही है। अगर ज़राअत मक़सूद थी तो मदीना और ख़ैबर के, ताएफ़ और नज्द के, शाम और यमन व इराक़ के काश्तकारों और ज़राअत पेशा आबादी को यह पूछने का हक़ था कि काश्तकारी और ज़राअत में हम मेहनत और कोशिश का कौन सा दक़ीक़ा उठा रखते हैं कि जिसके लिए एक नई उम्मत की बेअसत हो रही है। अगर दुनिया की चलती हुई मिशनरी में सिर्फ़ फिट होना था और हुकूमतों के नज़्म और नस्क़ और दफ़्तरी कारोबार को मुआवज़ा लेकर चलाना था तो रोम व ईरान के कारपरदाज़ाने सल्तनत को यह कहने का हक़ था कि इस फ़र्ज़ को अंजाम देने के लिए हम बहुत हैं और हमारे बहुत से भाई बेरोज़गार हैं, इसके लिए नये उम्मीदवारों की क्या ज़रूरत है?

लेकिन दरहक़ीक़त मुसलमान बिल्कुल ही एक नए और ऐसे काम के लिए पैदा किये जा रहे थे जो दुनिया में कोई न अंजाम दे रहा था और न अंजाम दे सकता था, इसके लिए एक नई उम्मत ही की बेअसत की ज़रूरत थी, चुनान्चा फ़रमायाः

"तुम बेहतरीन उम्मत हो जो लोगों के लिए पैदा की गई, भलाई का हुक्म देते और बुराई से रोकते हो और अल्लाह पर ईमान लाते हो।"

इसी मक़सद की ख़ातिर लोग वतन से बेवतन हुए, अपने कारोबार को नुक़सान पहुंचाया, अपना उम्र भर

का अंदोख़्ता लुटाया, अपनी जमी–जमाई तिजारतों पर पानी फेरा, अपनी खेती–बाड़ी और बाग़ात को वीरान किया, अपने ऐश व तनअम को ख़ैरबाद कहा, दुनिया की तमाम कामयाबियों और ख़ुशहालियों से आंखें बन्द कर लीं और ज़र्रीं मौक़े खो दिये, पानी की तरह अपना ख़ून बहाया और अपने बच्चों को यतीम और अपनी औरतों को बेवा किया। इन मक़ासिद व मशाग़िल के लिए जिन पर आज मुसलमान क़ानेअ नज़र आते हैं, इस हंगामा आराई और इस महशरख़ेज़ी की ज़रूरत न थी। इसके हुसूल का रास्ता तो बिल्कुल बेख़तर और हमवार था और इस रास्ते पर मआसिरे दुनिया से कोई बड़ी कशमकश और तसादुम नहीं था और न यह अहले अरब और दुनिया की दूसरी क़ौमों के लिए शिकायत की वजह थी। उन्होंने तो बार–बार उन्हीं चीज़ों की पेशकश की जो आज आम मुसलमानों का मुन्तहा है और हर बार इस्लाम के दाई ने उनको ठुकराया। दौलत व सरदारी, ऐश व इशरत और राहत व तन आसानी की बड़ी पेशकश को नामंज़ूर किया, फिर अगर मुसलमान को उसी सतह पर आ जाना था जिस पर ज़माना बेअसत की तमाम काफ़िर क़ौमें थीं और इस वक़्त भी दुनिया की तमाम ग़ैरमुस्लिम आबादी है और ज़िन्दगी के उन्हीं मशाग़िल में मुनहमिक और सरतापा ग़र्क़ हो जाना था जिनमें अहले अरब और रूमी व ईरानी डूबे हुए थे और उन्हीं कामयाबियों को अपना मुन्तहाए ज़िन्दगी बना लेना था जिनको उनके पैग़म्बर (स0अ0व0) उनके बेहतरीन मौक़े पर रद्द कर चुके थे, तो यह इस्लाम की इब्तिदाई तारीख़ पर पानी फेर देने के मुरादिफ़ है और इस बात का ऐलान है कि इन्सानों का वह बेशक़ीमत ख़ून जो बद्र व हुनैन व एहज़ाब और क़ादसिया व यरमूक में बहाया गया, बेज़रूरत बहाया गया।

आज अगर सरदाराने कुरैश को कुछ बोलने की ताक़त हो तो मुसलमानों को ख़िताब करके वह यह कह सकते हैं कि तुम जिन चीज़ों के पीछे सरगर्दां हो और जिन चीज़ों को तुमने अपनी ज़िन्दगी का हासिल समझ रखा है उन्हीं चीज़ों को हम गुनाहगारों ने तुम्हारे पैग़म्बर (स0अ0व0) के सामने पेश किया था, वह तमाम चीज़ें उस वक़्त ख़ून का एक क़तरा बहाए बग़ैर हो सकती थीं, तो क्या सारी जद्दोजहद का हासिल और उन तमाम कुर्बानियों की क़ीमत वह तर्ज़े ज़िन्दगी है जिसको तुमने अख़्तियार किया हुआ है और ज़िन्दगी व अख़्लाक़ की वही सतह है जिस पर तुमने क़नाअत कर ली है? अगर उन सरदाराने कुरैश में जो इस्लाम के हरीफ़ थे किसी को जिरह करने का मौक़ा मिले तो आज हमारा कोई बड़े से बड़ा लाएक़ वकील भी इसका तशफ़्फ़ी बख़्श जवाब नहीं दे सकता और उम्मत के लिए इस पर शर्मिन्दा होने के सिवा कोई चारा नहीं। रसूलुल्लाह (स0अ0व0) को मुसलमानों के बारे में यही ख़तरा था कि वह दुनिया में पड़कर अपना मक़सद न भूल जाएं और दुनिया की आम सतह पर न आ जाएं। आप (स0अ0व0) ने वफ़ात से क़रीब जो तक़रीर फ़रमाई उसमें मुसलमानों से फ़रमायाः

"मुझे तुम्हारे बारे में फ़क़्र व इफ़लास का ख़तरा नहीं है, मुझे तो इसका अंदेशा है कि कहीं दुनिया में तुमको भी वही कशाइश न हासिल हो जाए जैसी तुमसे पहले लोगों को हासिल हुई, तो तुम भी इसी तरह इसमें हिस्र व मुक़ाबला करो जैसे उन्होंने किया तो तुम को भी उसी तरह हलाक कर दे जैसे उनको हलाक किया।"

मुसलमानों की ज़िन्दगी की अस्ली साख़्त यह है कि या तो वह इस्लाम की दावत और अमली जद्दोजहद में मशगूल हो या उस दावत व अमली जद्दोजहद में मशगूल होने वालों के लिए पुश्त पनाह व मददगार हो उसके साथ भी अमली जद्दोजहद में हिस्सा लेने का अज़्म और शौक़ रखता हो। मुतमईन शहरी और महज़ कारोबारी ज़िन्दगी इस्लामी ज़िन्दगी नहीं है और किसी तरह भी यह किसी मुसलमान का मक़सूदे हयात नहीं हो सकता। जाएज़ मशाग़िले ज़िन्दगी, जाएज़ वसाएले मईशत हरगिज़ ममनूअ नहीं बल्कि नियत और अज़्र तलबी के साथ इबादत व कुब्रे इलाही का ज़रिया हैं, मगर उस वक़्त जब यह सब दीन के साये मे हों और सही मक़ासिद का वसीला हों न कि ख़ुद मक़सूद बिज़्ज़ात हों।

सीरते मुहम्मदी (स0अ0व0) का यह सबसे बड़ा पैग़ाम है जो ख़ालिस मुसलमानों के नाम है। इसकी तरफ़ तवज्जो न करना, इसके मक़सद को ज़ाया करना, सबसे बड़ी हक़ीक़त की तरफ़ से चश्मपोशी है जो सीरते मुहम्मदी (स0अ0व0) मुसलमानों के सामने पेश करती है।

(माख़ूज़ अज़ः सीरते मुहम्मदी का पैग़ाम मौजूदा दौर के मुसलमानों के नाम)

मुहब्बत-ए-रसूल (स०अ०व०) का तक़ाज़ा

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

किससे मुहब्बत का तक़ाज़ा:

अल्लाह तआला ने इन्सान के अन्दर मुहब्बत का माद्दा रखा है, उन्स व मुहब्बत का होना फ़ितरी चीज़ है, इन्सान किसी न किसी से मुहब्बत करता है। मुहब्बत के दरजात अलग हो सकते हैं; आदमी अपनी औलाद से मुहब्बत करता है, उसके इज़हार का तरीक़ा अलग होगा। आदमी अपनी अहिल्या से मुहब्बत करता है उसका तरीक़ा और इज़हार अलग होगा। आदमी अपनी मां–बहन से मुहब्बत करता है उसका तरीक़ा अलग होगा, यह मुहब्बत के ख़ाने हैं। आदमी जिस तरह अपनी बीवी से मुहब्बत करता है और जिस तरह उसके साथ पेश आता है, उस तरह अपनी बहन या मां से पेश नहीं आ सकता, न उस तरह उसके दिल में ख़्याल आ सकता है। आदमी को किसी से मुहब्बत है उसका पता उसके रवैये और मामलात से होता है। अगर बाप अपने बच्चों से मुहब्बत करता है तो उनका ख़्याल करता है, उनकी ज़रूरतों को पूरा करने की कोशिश करता है, अगर बच्चों की कोई मांग हो तो। अगर बीवी से मुहब्बत है तो उसके जाएज़ तक़ाज़ों को पूरा करता है। अगर कोई जिगरी दोस्त है तो उसकी ख़्वाहिश भी आदमी पूरी करने की कोशिश करता है और उसका ख़्याल करता है। अगर वालिदैन से मुहब्बत है तो उनके हुक्मों को बजा लाता है। यही मुहब्बत का तक़ाज़ा है। अगर कोई ख़ाली दावा करे कि मुझे अपने बच्चों से मुहब्बत है, मां–बाप से मुहब्बत है लेकिन उनका ख़्याल न रखे तो क्या कोई अक़्लमंद यह कह सकता है कि उसको मुहब्बत है? हक़ीक़त यह है कि इन्सान के अमल से ज़ाहिर होता है कि वह क्या है? उसको कहने की ज़रूरत नहीं कि मुझे मां–बाप से मुहब्बत है, बल्कि उनके हुक्मों को बजा लाने और उनकी ज़रूरतों को पूरा करने से दूसरे लोग समझ जाएंगे कि उसको अपने मां–बाप से मुहब्बत है, क्योंकि मुहब्बत का तक़ाज़ा यही है कि इन्सान जिससे मुहब्बत करता है उसकी तकलीफ़ बर्दाश्त नहीं कर सकता।

हक़ीक़ी मुहब्बत क्या है?

अल्लाह तआला ने फ़ितरी तौर पर इन्सान के अन्दर मुहब्बत रखी है। इन्सान दुनिया से मुहब्बत करता है, माल व दौलत से मुहब्बत करता है, अपने अज़ीज़ों से मुहब्बत करता है, लेकिन हक़ीक़ी मुहब्बत वह है जिसका अल्लाह तआला और उसके रसूल (स0अ0व0) ने हुक्म दिया है यानि तमाम मुहब्बतों से ज़्यादा अल्लाह और उसके रसूल (स0अ0व0) से मुहब्बत हो, यही हक़ीक़ी मुहब्बत है और इस मुहब्बत का अंदाज़ा हमें अपने आमाल से लगाना होगा, ख़ाली ज़बान से कह देना या नारे लगाना या बड़े–बड़े जुलूस निकालना काफ़ी नहीं होगा। जब मुहब्बत होगी तो लोग ख़ुद ब ख़ुद पहचान लेंगे कि उसको अल्लाह और उसके रसूल (स0अ0व0) से मुहब्बत है। न किसी नारे की ज़रूरत है न कोई ऐलान करने या इश्तिहार लगाने की ज़रूरत है बल्कि हमारा अमल और हमारी ज़िन्दगी और हमारे शब व रोज़ बताएंगे कि हमें अल्लाह और उसके रसूल (स0अ0व0) से मुहब्बत है या नहीं?! जैसा कि एक दुकानदार अगर अपनी दुकान में अच्छा सामान रखता है और हेरा–फेरी नहीं करता, तो लोग ख़ुद–ब–ख़ुद उस दुकान की तरफ़ खिंचे चले आते हैं, उसको किसी ने इश्तिहार लगाने या ऐलान करते नहीं देखा होगा बल्कि सब यूं ही जान लेते हैं कि फ़लां दुकानदार अच्छा है, लोग दूर–दूर से आते हैं और उसका सामान ख़रीदकर ले जाते हैं।

ज़रूरत इस बात की थी कि हमारी ज़िन्दगी सौ फ़ीसद नबी (स0अ0व0) के बताए हुए तरीक़े के मुताबिक़ होती और हमारा एक अमल भी सुन्नत के ख़िलाफ़ न होता, यही नबी (स0अ0व0) से मुहब्बत का तक़ाज़ा है। बेशक सीरत के जलसे करना मुफ़ीद है, ख़ासकर ऐसे वक़्त में जब अवामुन्नास और मुआशरे पर इसके अच्छे असरात ज़ाहिर हो रहे हों लेकिन अगर

यह जलसे–जुलूस एक रस्म बनकर रह जाएं या और कोई मक़सद पेशेनज़र हो तो ऐसे जलसों से कोई फ़ायदा नहीं।

तालिबान–ए–उलूमे नुबूव्वत के लिए लम्हा–ए–फ़िक्रिया

तालिबाने उलूमे नुबूव्वत को एक ऐसी निस्बत हासिल है जो किसी को हासिल नहीं। उन्हें नबवी निस्बत हासिल है। वह नबवी उलूम हासिल करते हैं। लोग उनको बड़े एहतिराम की निगाह से देखते हैं। बाज़ इलाक़ों में तो बड़ा इकराम किया जाता है। ऐसा क्यों है?! क्योंकि वह नबवी उलूम से वाबस्ता हो गए हैं। मैं तो समझता हूं कि हमारा कभी इस तरफ़ ज़हन ही नहीं जाता और न हम कभी इस बारे में कुछ ख़्याल करते हैं। कभी हम एहसास ही नहीं करते कि हम क्या हासिल कर रहे हैं? यह बड़ी ख़तरनाक बात है। जब तक एहसास नहीं होगा, उस वक़्त तक हम कुछ नहीं कर सकते। नबवी उलूम की हमें निस्बत हासिल है कम से कम हम उसका तो ख़्याल करें। हमारे बारे में लोग बहुत कुछ सोचते हैं, अच्छा गुमान करते हैं, अल्लाह तआला हमें उनके गुमान के मुताबिक़ बना दे। कुछ अर्से बाद तालिबाने उलूमे नुबूव्वत का शुमार तबक़ा उलमा में होने लगेगा, इसलिए वह फ़राग़त–ए–इल्मी से पहले–पहले उन तमाम सिफ़ात को अपने अन्दर पैदा कर लें जो उलमा के शायाने शान हैं। हमें तो उम्मत के लिए नमूना बनना है। हमारी ज़िन्दगी तो सुन्नते नबवी (स0अ0व0) के सांचे में ढली हो। हम तो ऐसे बन जाएं कि कोई अमल हमारा सुन्नत के ख़िलाफ़ न हो। हम हदीसें भी पढ़ते हैं, कुरआन पाक की तफ़सीर भी पढ़ते हैं, सीरत की किताबों को मुताला भी करते हैं, फिर क्यों हमारी ज़िन्दगी नबवी सिफ़ात से आरी होती है? बाज़ मर्तबा हमारे साथी ऐसी बुरी आदतों के आरी हो जाते हैं जो हमारे लिए क्या, किसी के लिए भी जाएज़ नहीं। हमारी तरफ़ से अगर छोटी सी ग़लती भी सरज़द होगी तो उसको भी बहुत बड़ा समझा जाएगा। इसलिए बहुत एहतियात से चलने की ज़रूरत है।

बाज़ मर्तबा तलबा बेकार के कामों में अपना क़ीमती वक़्त ख़राब कर देते हैं, या दोस्तों के सैर व तफ़रीह करने या बाज़ारों में घूमने में लगे रहते हैं, या कहीं मजलिस लगाकर बैठते हैं तो एक–दूसरे की चुग़ली और ग़ीबत के मुरतकिब होते हैं और न जाने क्या–क्या बुराइयां करते हैं?! हम इस निस्बत का ख़्याल करें जो हमें हासिल है। हम रात–दिन कुरआन व हदीस सुनते और पढ़ते हैं लिहाज़ा सबसे ज़्यादा हमें अल्लाह और उसके रसूल (स0अ0व0) से मुहब्बत होनी चाहिए और मुहब्बत का तक़ाज़ा यह है कि कोई भी अमल अल्लाह और उसके रसूल (स0अ0व0) की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ न हो। (तरतीब व पेशकशः मुहम्मद सलमान बिजनौरी)

माह–ए–रबीउल अव्वल का पैग़ाम

“हुज़ूर अक़दस (स०अ०व०) की ज़िन्दगी का कोई गोशा और नमूना ऐसा नहीं है जो बेहतरीन मिसाल न पेश कर रहा हो। अगर तुम हाकिम हो तो तुम्हारे लिए बेहतरीन मिसाल मदीना तैय्यबा के उस हाकिम की है जिसने चन्द सालों के अन्दर जज़ीरा–ए–अरब में इस्लाम का झंडा लहरा दिया और अगर तुम दोस्त हो तो तुम्हारे लिए बेहतरीन नमूना हज़रत सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि०) और फ़ारूक़–ए–आज़म (रज़ि०) के दोस्त में है। अगर तुम शौहर हो तो तुम्हारे लिए हज़रत आयशा (रज़ि०), हज़रत उम्मे सलमा (रज़ि०) और हज़रत मैमूना (रज़ि०) के शौहर की ज़िन्दगी में नमूना है। अगर तुम एक ताजिर हो तो तुम्हारे लिए बेहतरीन नमूना उस मुहम्मद (स०अ०व०) की हयात–ए–तैय्यबा में है जो तिजारत के लिए मुल्के शाम गए थे। अगर तुम मज़दूर हो, या मुलाज़िम या कोई और पेशावर तो तुम्हारे लिए बेहतरीन नमूना वह मज़दूर है जो हिजाज़ की पहाड़ियों में बकरी चराया करता था और अगर तुम काश्तकार हो, ज़राअत पेशा हो तो तुम्हारे लिए बेहतरीन नमूना उस काश्तकार में है जिसने जर्फ़ के मक़ाम पर ज़मीन की काश्तकारी की थी। ग़रज़ ज़िन्दगी का कोई गोशा ऐसा नहीं जिसमें अल्लाह तआला ने हुज़ूर अक़दस (स०अ०व०) की ज़िन्दगी का बेहतरीन नमूना न छोड़ा हो। जिस्म से लेकर रूह तक ज़िन्दगी के जितने मवाक़ेअ हैं इसमें हम हयाते नबी करीम (स०अ०व०) से हिदायत लेने की कोशिश करें। अगर हम रबीउल अव्वल में यही जज़्बा पैदा कर लें तो यक़ीनन हमारी ज़िन्दगी में इन्क़िलाब आ जाएगा।” (इस्लाही ख़ुत्बात: २० /१३४–१३५)

मौलाना मुफ़्ती तक़ी उस्मानी

तक़्वा क्या है?

सैय्यद बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

हस्बे इस्तिताअत तक़्वे का मुतालबा:

"तो जितना हो सके तक़्वे को लाज़िम पकड़ो।"
(सूरह तग़ाबुनः 16)

इस आयत के ज़रिये बताया गया है कि जहां तक तुमसे मुमकिन हो वहां तक अमल करो और अल्लाह का लिहाज़ रखो। यानि अल्लाह का ऐसा ध्यान पैदा हो जाए कि आदमी हर वक़्त यह महसूस करे कि कोई देख रहा है। जब यह बात पैदा हो जाती है तो तक़्वे की आला तरीन सिफ़त पैदा होती है और यह इन्सानी मिज़ाज है कि जब तक वह समझता है कि कोई देखने वाला उसको देख रहा है और वह मुआख़ज़ा कर सकता है तब तक वह काम ठीक करता है और जहां यह समझता है कि उसका मुआख़ज़ा नहीं होगा तो फ़ौरन ग़ाफ़िल हो जाता है। बतौर मिसाल मज़दूरों को ले लीजिए, जब तक ठेकेदार उनके सामने खड़ा रहता है तब तक वह अपने कामों में मश्गूल रहते हैं और जहां वह गया तो सब काम ख़त्म। गोया जब तक उन्हें यह एहसास है कि उनकी पकड़ा हो सकती है तभी तक वह काम करते हैं और यही इन्सानी मिज़ाज है।

अस्ली तक़्वाः

इन्सान के अन्दर अल्लाह का लिहाज़ जब ही पैदा होगा, जब वह सोचे कि उसका मालिक उन्हें हर लम्हा देख रहा है और उसकी निगाहों से वह ओझल नहीं हो सकते।

"निगाहें उसको नहीं पा सकतीं जबकि निगाहें उसके घेरे में हैं और वह बड़ा बारीक बीं पूरा बाख़बर है।"
(सूरह इनआमः 103)

इन्सान जो कुछ कर रहा है वह उस मालिक के सामने है। अगर इन्सान यह चीज़ महसूस करे और यह एहसास ग़ालिब हो जाए तो फिर वह गुनाह नहीं कर सकता। इसीलिए मशाएख़ के यहां ज़िक्रे क़ल्बी व जहरी के ज़रिये इस चीज़ की मश्क़ कराई जाती है और आदमी के अन्दर यह बात पैदा कराई जाती है कि अल्लाह का ध्यान इस तरह ज़हन व दिमाग़ पर छा जाए कि आदमी फिर हर वक़्त यह महसूस करे कि अल्लाह उसको देख रहा है। हज़राते सहाबा को यही यक़ीन हासिल था, इसीलिए उनका यह हाल हो गया था कि बाज़ मर्तबा वह क़ज़ाए हाजत के लिए भी जाते थे तो उनकी अजीब कैफ़ियत होने लगती थी कि किस तरह वह अपना सतर खोलें क्योंकि अल्लाह हर हाल में देख रहा है और वह तुम्हारे अन्दर–बाहर हर चीज़ से वाक़िफ़ है। ज़ाहिर है जितना ज़्यादा यह चीज़ ग़ालिब हो जाएगी उतना ही ज़्यादा गुनाहों से बचना इन्सान के लिए आसान हो जाएगा और यही अस्ल "तक़्वा" है।

तक़्वे में इज़ाफ़ा कैसे हो?

आदमी को अल्लाह का लिहाज़ जब ही हो सकता है जब वह हर वक़्त यह सोचे कि अल्लाह देख रहा है और उसको यह यक़ीन हो कि अल्लाह की ज़ात अज़मत व शफ़क़त और मुहब्बत वाली ज़ात है, उसने हर चीज़ जो हमारी ज़रूरत की हो सकती थी वह हमें अता फ़रमाई है, जब वह ज़ात इस क़द्र मेहरबान है तो हमें उसका लिहाज़ भी होना चाहिए। अहलुल्लाह के यहां इसी इस्तहज़ार की मश्क़ कराई जाती है क्योंकि जितनी ज़्यादा यह मश्क़ होगी उतनी ही ज़्यादा तक़्वा की जो ख़ास तौर से अन्दरूनी सिफ़त है वह बढ़ती चली जाती है।

एक बुज़ुर्ग का क़िस्सा है कि उनकी ख़िदमत में कोई नौजवान अल्लाह का बन्दा तरबियत के लिए हाज़िर हुआ और चन्द दिनों में अल्लाह तआला ने उसको ग़ैर मामूली मक़ाम से नवाज़ा। वहां उसने ऐसी मेहनत की और उसकी इस तरह तरबियत हुई कि वह अपने शेख़ से बहुत क़रीब हो गया। इस चीज़ को देखकर शेख़ के क़दीम ख़िदमतगुज़ारों को रश्क आया और बाज़ लोगों को हसद भी हुई कि यह नया आदमी आया और बहुत

कम अर्से में कहां से कहां चला गया, जबकि हम लोग वहीं के वहीं हैं। यह बात जब उन बुज़ुर्ग को महसूस हुई तो उन्होंने एक दिन तमाम मुरीदीन और ख़ादिमीन को बुलाकर उनका इस तरह इम्तिहान लिया कि उनमें से हर एक को ज़िबह करने के लिए एक मुर्ग़ा दिया और साथ ही यह शर्त भी लगा दी कि मुर्ग़ा ऐसी जगह ज़िबह करना जहां कोई देख न रहा हो। बज़ाहिर यह बहुत आसान काम था तो सब गए और छिप–छिपाकर ज़िबह करके ले आए लेकिन वह नवजवान अल्लाह का बन्दा जिसको अल्लाह ने बहुत कम वक़्त में ख़ास मर्तबा अता फ़रमाया था वह अपना मुर्ग़ा बग़ैर ज़िबह किये वापस आ गया, उसको देखकर लोगों को ख़्याल हुआ कि अब शेख़ के यहां उनकी सरज़निश होगी क्योंकि उन्होंने शेख़ की बात पर अमल नहीं किया। लेकिन जब उनसे सवाल किया गया कि तुमने अपना मुर्ग़ा ज़िबह क्यों नहीं किया? तो उन्होंने अपना उज़्र यह बताया कि "हज़रत! मैं ज़िबह कैसे करता? मैं जहां ज़िबह करने बैठता था तो एकदम से मुझे यह ख़्याल आता था कि अल्लाह तो मुझे देख रहा है और आपने यह ताकीद की थी कि ऐसी जगह ज़िबह करना जहां कोई न देख रहा हो, तो मैं यह पूछने आया हूं कि क्या इस हुक्म में अल्लाह तबारक व तआला की ज़ात भी आपने शामिल फ़रमाई है, या इस हुक्म से सिर्फ़ यह मुराद है कि उसकी मख़लूक़ में से कोई न देख रहा हो?" इस सवाल पर उन बुज़ुर्ग ने कहा कि इस नवजवान को हर वक़्त और हर हाल में अल्लाह के इस्तहज़ार की यह कैफ़ियत हासिल है जिसकी वजह से अल्लाह तआला ने इसको मक़ामे कुर्ब अता किया है और मैं इसी बुनियाद पर इससे मुहब्बत करता हूं।

तक़्वा की कैफ़ियत का नतीजा:

आदमी के अन्दर जब यह कैफ़ियत पैदा हो जाती है कि अल्लाह उसको देख रहा है तो इसका नतीजा यह होता है कि उसके अन्दर तक़्वे की आला कैफ़ियत पैदा हो जाती है और यह "जैसे उससे डरना चाहिए" की वह कैफ़ियत है जो अल्लाह अपने ख़ास–ख़ास बन्दों को बता फ़रमाता है और फिर वह हर वक़्त अल्लाह के हुक्म के फ़रमाबरदार और ताबेअदार होते हैं, उनका दिल दुनिया की तरफ़ कितना ही माएल होता हो लेकिन जब वह यह देखते हैं कि अल्लाह उनकी इस बात से नाराज़ होगा तो वह काम फ़ौरन छोड़ देते हैं। उसकी सबसे बेहतरीन मिसाल शराब की हुरमत का वह ऐलान है जो मदीना मुनव्वरा में हुआ और तमाम मुसलमानों ने उसी लम्हे मुंह में लगी हुई शराब छोड़ दी, जबकि वह उसके ग़ैर मामूली आदी थे। हुज़ूर (स0अ0व0) के मदीना तैय्यबा आने के बाद भी फ़ौरन शराब हराम नहीं हुई थी बल्कि पहले मरहले में बस इतना कहा गया था कि:

"नशे की हालत में नमाज़ के क़रीब भी मत होना।" (सूरह निसास: 43)

कुरआन मजीद के इस हुक्म से उन हज़रात के अन्दर किसी दर्जे एहतियात पैदा हो गया था लेकिन बहरहाल वह लोग शराब के आदी थे और इब्तिदा में उसकी इजाज़त भी थी मगर जिस वक़्त शराब की हुरमत का बाक़ायदा ऐलान हुआ तो उस वक़्त जो तफ़सीलात सीरत की किताबों में आती है वह हैरतअंगेज़ हैं, रिवायात में है कि अगर शराब का जाम किसी के मुंह में लगा हुआ था और उसे यह बात पता चली कि शराब हराम हो गयी तो उसी वक़्त जाम मुंह से हटा दिया और शराब के मटके तोड़ डाले। तारीख़ में आता है कि जिस दिन शराब की हुरमत का ऐलान हुआ उस दिन शराब मदीना की गलियों में बह रही थी।

तक़्वे का मिज़ाज न होने का नतीजा:

इसके बिलमुक़ाबिल अगर हमारे ज़माने के लोग होते तो शायद यही कहते कि अभी तो हुरमत का ऐलान हो रहा है और अभी तो इसकी तहक़ीक़ भी नहीं हुई है, जब तक तहक़ीक़ नहीं होती है तब तक तो पी ही सकते हैं और जो जाम अभी मुंह से लगा है उसको तो आख़िरी–आख़िरी मर्तबा चढ़ा ही लें। हम सब जानते हैं कि लाक डाउन के मौक़े पर कुछ मुद्दत बाज़ार बन्द रहने के बाद जब शराब की दुकानें खोली गईं तो तमाशा बन गया था, मालूम होता था कि इस मुल्क में सब के सब शराबी हैं और सब उसी की लाइन में खड़े हैं। इसलिए कि शराबियों का यह हाल होता है कि जब शराब उनके मुंह से लग जाए तो आसानी से नहीं छूटती। बाज़ मर्तबा यह होता है कि पूरी दौलत उनकी ले लो और उसके बदले में उन्हें शराब दे दो या नशे की चंद गोलियां उन्हें दे दो क्योंकि उनके लिए बर्दाश्त करना मुश्किल हो जाता है।

निकाह के चन्द मसाएल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

वकालत के मसाएल

निकाह में वकील बनाना:

जो काम करना इन्सान के लिए जाएज़ हो उसमें यह भी जाएज़ होता है कि किसी को वकील बना दे और वह उसकी तरफ़ से उस काम को अंजाम दे। जिस काम का ज़िम्मेदार बनाया उसको "मुअक्किल" कहा जाता है और जिसको ज़िम्मेदार बनाया गया उसको "वकील" कहा जाता है। हमारे उर्फ़ में वकील सिर्फ़ अदालती और क़ानूनी कामों में एक ख़ास डिग्री रखने वाले को जिसको अपना नुमाइन्दा बनाया हो कहते हैं, लेकिन फ़िक़्ह में हर वह शख़्स वकील है जिसको बेचने–ख़रीदने या शादी वग़ैरह करने का ज़िम्मेदार बनाया गया हो और जिसने नुमाइन्दा बनाया है वह "मुअक्किल" है। आप (स0अ0व0) ने हज़रत हकीम बिन हिज़ाम (रज़ि0) को कुर्बानी का जानवर ख़रीदने का वकील बनाया।

(तिरमिज़ी: 1257, अबूदाऊद: 3386)

इसी तरह आप (स0अ0व0) ने हज़रत मैमूना (रज़ि0) से निकाह दो वकीलों यानि हज़रत अबू राफ़ेअ और एक अंसारी सहाबी को बनाकर किया था। (मोअत्ता–किताबुल हज–बाबुन्निकाह अलमहरम: 996)

वकील बनाने के लिए शहादत शर्त नहीं है:

मज़कूरा बाला तफ़सील से मालूम हुआ कि जिस तरह दूल्हे या दुल्हन का मजलिसे निकाह में आकर दो गवाहों की मौजूदगी में ईजाब–कुबूल करने से निकाह सही हो जाता है, उसी तरह अगर दोनों में से कोई एक या दोनों का वकील भी गवाहों की मौजूदगी में ईजाब–कुबूल करे तो निकाह हो जाएगा। हमारे दयार में लड़की को महफ़िले निकाह में नहीं लाया जाता, कोई जाकर उससे निकाह की इजाज़त लेता है। हक़ीक़त में वही उसका वकील होता है। एहतियात इसमें है कि उस तौकील के वक़्त भी गवाह मौजूद रहें, ताकि अगर तौकील का इनकार किया जाए तो वह गवाही दे सकें, लेकिन उस वक़्त गवाहों का होना शर्त नहीं है, और अगर गवाह बना लिये गए तो यह शर्त नहीं है कि यही अक़्दे निकाह के भी गवाह हों, यह हो सकता है कि तौकील और इजाज़त के गवाह दूसरे हों और अक़्दे निकाह के दूसरे हों।

(हिन्दियाः 1/294, फ़तेहुल क़दीरः 3/301)

जब क़ाज़ी और वकील अलग–अलग हों:

बहुत सी जगहों में लड़की से इजाज़त लेने ख़ुद क़ाज़ी जाता है, इस सूरत में तो देखा जाए तो वही निकाह का वकील भी बन जाता है, अगरचे निकाहनामा में वकालत में दूसरे शख़्स का नाम लिखा होता है। हमने पीछे बयान किया है कि औरतों के मजमे में इस तरह से जाने का कोई तुक नहीं है, लड़की के औलिया में से किसी को ऐसे वक़्त इजाज़त ले लेना चाहिए जब घर में अजनबी औरतें न हों। अब जहां इस तरह इजाज़त ली जाती है, वहां भी आम तौर से निकाह कोई और पढ़ाता है, वकील या वली–ए–निकाह नहीं पढ़ाता। तो एक बात याद रखना चाहिए कि वकील दूसरे को वकील नहीं बना सकता, अलबत्ता अगर मजलिस में वली और वकील मौजूद हो और क़ाज़ी उसकी मौजूदगी में निकाह पढ़ाए तो जाएज़ है और अगर वकील मौजूद न हो तो यह निकाह फ़िलहाल मौक़ूफ़ होगा, फिर जब लड़की बख़ुशी रुख़्सत हो जाए तो मुनअक़िद हो जाएगा, इसलिए कि यह "निकाह–ए–फ़िज़ूली" है और आगे आ रहा है कि फ़िज़ूली का पढ़ाया हुआ अक़्द असील की रज़ामन्दी हासिल हो जाने के बाद मुनअक़िद हो जाता है, इससे पहले माकूफ़ रहता है।

(हिन्दियाः 1/364–365)

बाहर रहने वाले का वकील बनाना:

आजकल यह सूरत कसरत से पेश आती है कि लड़का किसी बाहरी मुल्क में मुलाज़िम है, उसकी

शादी की तारीख़ें रख दी गईं, यहां तक कि कार्ड भी तक़सीम हो गए, लड़के को पूरी उम्मीद थी कि वह मुक़र्रर वक़्त पर आ जाएगा, लेकिन फिर वह किसी क़ानूनी रुकावट की वजह से नहीं आ पाता, अब उसके घरवाले चाहते हैं कि उसका निकाह तय तारीख़ पर ही करा दिया जाए तो वह सवाल करते हैं कि क्या फ़ोन पर उसे ईजाब–कुबूल करवाया जा सकता है? पीछे हम लिख चुके हैं कि ग़ैर मौजूदगी में फ़ोन वग़ैरह के ज़रिये ईजाब–कुबूल करवाना सही नहीं है, अलबत्ता लड़का अगर फ़ोन के ज़रिये किसी को अपना वकील बना दे फिर मजलिस में लड़की का भी वकील वली या क़ाज़ी कहे कि मैंने फ़लाना बिन्ते फ़लां को तुम्हारे मुअक्किल फ़लां बिन फ़लां के निकाह में दिया और लड़के का वकील कहे कि मैंने उसकी तरफ़ से कुबूल किया तो निकाह हो जाएगा।

(बदाए सनाए: 2/487–488, फ़िक़ एकेडमी के फ़ैसले: 95)

वकालत के मुतफ़र्रिक़ मसाएल

औरत को वकील बनाना:

1– जिस तरह मर्द को वकील बनाना जाएज़ है, उसी तरह किसी औरत को भी वकील बनाना जाएज़ है। (हिन्दिया: 1/295)

2– किसी शख़्स का दोनों की तरफ़ से वकील बननाः शरअन यह भी जाएज़ है कि एक शख़्स लड़के और लड़की दोनों की तरफ़ से वकील बना दिया जाए, जैसेः एक शख़्स को किसी ने निकाह का वकील बनाया और उसी ने लड़की से इजाज़त भी ले ली और फिर उसने शहादते शरीअह की मौजूदगी में कहा कि मैंने फ़लां बिन फ़लां का निकाल फ़लाना बिन्ते फ़लां से कराया तो निकाह मुनअक़िद हो जाएगा।

(हिदाया मअ अलफ़तेहः 3/105)

3– वकालत के लिए गवाही शर्त नहीं; यह ज़रूरी नहीं है कि एक शख़्स को जिस वक़्त वकील बनाया जा रहा हो गवाह भी मौजूद हों, अलबत्ता मुनासिब यही है कि गवाह बना लियें जाएं ताकि अगर बाद में मुअक्किल वकील बनाने का इनकार करे तो वह गवाही दे सकें। (हिन्दिया: 1/294)

फ़ुज़ूली किसे कहते हैं?

अगर कोई शख़्स अपना निकाह ख़ुद करे तो उसको "असील" कहा जाता है और अगर बाप–दादा या कोई दूसरा वली नाबालिग़ का निकाह कराएं तो शरअन दुरुस्त है और असील ही की तरह उसको भी निकाह कराने का अख़्तियार होता है और अगर किसी को निकाह कराने का वकील बना दिया जाए तो जैसा कि अभी बयान किया गया उसको भी निकाह कराने का अख़्तियार रहता है बशर्ते कि मुअक्किल उसको माज़ूल न कर दे, अब अगर कोई अजनबी शख़्स उन अख़्तियारात में से किसी के बग़ैर किसी मर्द या औरत का निकाह करा दे तो यह शख़्स "फ़िज़ूली" कहलाता है। (अलबहरुर्राएक़: 3/137)

फ़िज़ूली के निकाह का हुक्म:

एक ही शख़्स ज़ौजेन का वकील बन सकता है, लेकिन एक ही शख़्स ज़ौजेन की तरफ़ से फ़िज़ूली नहीं बन सकता है, चुनान्चे अगर एक शख़्स जो न वली हो न वकील, कहेः "मैंने फ़लां का निकाह फ़लां औरत से कराया" और इत्तिला मिलने पर दोनों कुबूल कर लें, तब भी यह निकाह सही नहीं होगा। इसी तरह अगर कोई शख़्स अपना निकाह किसी औरत से करे और औरत मजलिस में मौजूद न हो, बाद में जब उसको इत्तिला मिले तो वह कुबूल कर ले तब भी निकाह मुनअक़िद नहीं होगा, इसलिए कि यह जाएज़ नहीं कि एक ही शख़्स अपनी तरफ़ से असील और दूसरे की तरफ़ फ़ुज़ूली हो, हां एक शख़्स कहे कि मैंने फ़लां बिन फ़लां का निकाह फ़लाना से कराया और दूसरा शख़्स कहे कि मैंने कुबूल किया, दोनों ही फ़ुज़ूली थे, बाद में जब मर्द–औरत को इत्तेला मिली तो उन्होंने कुबूल कर लिया या लड़के या लड़की में से किसी ने कहा कि मैंने फ़लां औरत या फ़लां मर्द से निकाह किया और एक फ़ुज़ूली बोला कि मैंने उसकी तरफ़ से कुबूल किया, फिर ग़ाएब को इत्तेला मिली तो उसने कुबूल कर लिया तो निकाह मुनअक़िद हो जाएगा। (हिन्दिया: 1/299)

खुलासा यह है कि फ़ुज़ूली का कराया हुआ निकाह असील या वली की इजाज़त पर मौक़ूफ़ होता है। इजाज़त दे दें तो मुनअक़िद हो जाएगा, वरना बातिल हो जाएगा। (हिन्दिया: 1/299)

ज़ाहिर परस्तों से ख़िताब

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

"और जब हम लोगों को उन पर आने वाली मुसीबत के बाद रहमत का मज़ा चखाते हैं तो वह अचानक हमारी आयात में मक्र से काम लेते हैं, आप कहें अल्लाह की चाल निहायत तेज़ है, बेशक हमारे फ़रिश्ते उन चालों को नोट करते हैं जो तुम चलते हो।" (सूरह यूनुसः 21)

मज़कूरा आयत के ज़रिये ज़ाहिर परस्तों और ग़ैब पर यक़ीन रखने वालों की ज़हनियत में फ़र्क़ वाज़ेह किया जा रहा है। जो ज़ाहिर परस्त होता है वह ख़ालिस कुदरत की निशानियों की भी कोई न कोई माद्दी तौजीह कर ही लेता है, यह ज़ाहिर परस्ती का तबई नतीजा है। इस ज़हनियत से इन्सान दो तरह के दीनी नुक़सान में मुब्तिला होता है; एक यह कि वह मुसीबत व हादसों से इबरत हासिल नहीं करता जिसे "तज़क्कुर" कहा जाता है, दूसरा वह नेमतों पर शुक्र अदा करने से भी महरूम रहता है जिसे "तशक्कुर" कहा जाता है। आम तौर पर अलल व असबाब के चक्कर काटने वाले यकीने सादिक़ की मंज़िल तक नहीं पहुंच पाते। मुश्रिकीने अरब में बाज़ का हाल यह था कि किसी मुसीबत के बाद राहत मिलती तो असबाब व मुसब्बबात के ताने–बाने बुनने लग जाते और यह फ़ैसला करके मुतमईन हो जाते कि मुसीबत का सबब फ़लां बात बनी और राहत का सबब फ़लां वाक़्या बना। इस तरह न मुसीबत से इबरत हासिल करते, न राहत पर शुक्र बजा लाते। यह ख़ालिस माद्दा परस्त लोग थे, कुछ इनमें तवह्हुम परस्त थे, यह मुसीबत व राहत के ग़ैबी असबाब तो बयान करते लेकिन उनके बयान किये हुए असबाब किसी देवी–देवता या चांद सितारों की चाल या फिर किसी और मौहूमे ग़ैबी ज़रिया पर पहुंचकर रुक जाते और उन मौहूम ख़ुदाओं को राज़ी करने के लिए बदअक़ीदगी का एक लम्बा–चौड़ा दरवाज़ा खोल दिया जाता। कुरआन एक तरफ़ माद्दा परस्ती के ज़ेरे असर इनकारे ग़ैब को "आयात व निशानियों में मक्कारी करना" कहता है और दूसरी तरफ़ मौहूम ख़ुदाओं की तरफ़ ग़ैब की निस्बत करने को भी "आयात व निशानियों में मक्कारी करना" दोनों तबकों को यकसां तौर पर गुमराह क़रार देता है।

आयत यह भी बताती है कि इन्सान दावा तो अल्लाह का बन्दा होने का करता है, लेकिन आम तौर पर वह मफ़ाद का बन्दा वाक़ेअ हुआ है, मुसीबत में अल्लाह को याद करता है लेकिन जैसे ही मुसीबत दूर होती है, झूठी तावीलात का सहारा लेकर अल्लाह से किये हुए तमाम अहद व पैमान भुला देता है, मुसीबत को अपने बुरे आमाल का नतीजा क़रार नहीं देता बल्कि हालात का तक़ाज़ा क़रार देकर अपने आप को ज़िम्मेदारी से बरी समझता है। या उन मुसीबतों को भी तबई असबाब के हवाले करके मुतमईन हो जाता है। कहता है कि फ़लां सबब की वजह से आग लग गई, फ़लां चीज़ तबाहकुन सैलाब का बाइस बनी, फ़लां मरतबा ज़मीनी व जुग़राफ़ियाई हालात हलाकतख़ेज़ ज़लज़ले का सबब बने, बारिश की कमी की वजह से क़हत पड़ा वग़ैरह। किसी भी आफ़त व बरबादी को ज़ाहिरी असबाब के हवाले करके मुतमईन होना हक़ीक़त में अल्लाह की निशानियों के साथ खिलवाड़ करना है, इसी को कुरआन "आयात व निशानियों में मक्कारी करना" कहता है। असबाबे ज़ाहिरी के पीछे जो मख़्फ़ी असबाब होते हैं उन तक पहुंचना हक़ीक़ी दीनी फ़हम है। इन्सान तहलील व तज्ज़िया के ज़रिये ज़ाहिरी असबाब तक ज़रूर पहुंचे और उसका इलाज जो भी मुमकिन हो ज़रूर करे लेकिन उससे बढ़कर हक़ीक़ी तहलील व तज्ज़िया की ज़रूरत है। जो लोग ग़ैब पर ईमान के क़ायल हैं, उनके ज़िम्मे ज़रूरी है कि हक़ीक़ी असबाब पर ग़ौर करें और उन असबाब के इलाज की हर मुमकिन कोशिश करें। रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने बाज़ नताएजे बद के ख़ास असबाब बयान फ़रमाए हैं उन पर निगाह रखी जाए ताकि बसीरत की ज़िन्दगी नसीब हो। आप (स0अ0व0) का इरशाद हैः

"पांच असबाब के पांच नताएज ज़ाहिर होते हैं; जो क़ौम वादा तोड़ती है अल्लाह उन पर दुश्मनों को मुसल्लत करता है, जो लोग अल्लाह की उतारी हुई

शरीअत को छोड़कर दूसरी चीज़ों से फ़ैसला करते हैं उनमें फ़क्र व फ़ाक़ा आम होता है, लोगों में जब खुल्लम–खुल्ला फ़ह्हाशी आम होती है उनमें मौत व हलाकत बहुत बढ़ जाती है, जो लोग नाप–तौल में कमी करते हैं वह पैदावार से महरूम होते हैं और क़हत का शिकार होते हैं, जो लोग ज़कात अदा नहीं करते उन पर बारिश रोक दी जाती है।"

बाज़ रिवायत के अल्फ़ाज़ यूं हैं:

"जिन लोगों में खुल्लम–खुल्ल फ़ह्हाशी आम होती है उनमें ताऊन (प्लेग) फूट पड़ता है और ऐसी बीमारियां आती हैं जो उनके असलाफ़ में कभी नहीं रहीं और जो लोग नाप–तौल में कमी करते हैं वह नाक़ाबिले बर्दाश्त इख़्राजात में मुब्तिला होते हैं और बादशाह के ज़ुल्म का शिकार होते हैं, जो लोग अल्लाह व रसूल के अहद को तोड़ते हैं उन पर अल्लाह अजनबी दुश्मन को मुसल्लत करता है जो उनकी बाज़ चीज़ें छीन लेता है, जिनके पेशवा किताबुल्लाह के मुताबिक़ फ़ैसला नहीं करते और अल्लाह की शरीअत का क़स्द नहीं करते, अल्लाह उनको आपस के झगड़ों में मुब्तिला करता है।"

यह बातें नबी करीम (स0अ0व0) ने हज़राते मुहाजिरीन से बयान फ़रमाईं और साथ ही यह भी फ़रमाया कि मैं अल्लाह की पनाह चाहता हूं कि तुम इसमें मुब्तिला हो जाओ।

अल्लाह की चाल बहुत तेज़ है यानि जो लोग हमारी निशानियों के साथ खिलवाड़ करते हैं उनको मामूली समझकर नज़रअंदाज़ करते हैं वह बहुत जल्द इसका मज़ा चखेंगे। अल्लाह मोहलत तो देता है लेकिन अगर वह कार्यवाही करना चाहे तो फिर मिनटों और सेकेन्डों में फ़ैसला हो जाता है।

"बेशक हमारे फ़रिश्ते उन चालों को नोट करते है जो तुम चलते हो" यहां "रुसूलुन" से मुराद वह मुहाफ़िज़ फ़रिश्ते हैं जो इन्सान के आमाल को लिखते जाते हैं, यह मज़ीद धमकी भरा अंदाज़ है यानि तुम्हारी एक–एक मक्कारी को हमारे फ़रिश्ते नोट कर रहे हैं।

कहा जाता है कि जब मक्का में क़हत पड़ा तो अबूसुफ़ियान ने आप (स0अ0व0) से क़हत की शिकायत की और कहा कि आपकी दुआ से अगर क़हत ख़त्म हो जाए तो हम आपकी तस्दीक़ करेंगे। आप (स0अ0व0) की दुआ से क़हत ख़त्म हुआ और ख़ूब बारिश हुई लेकिन मक्का वाले अपने वादे से मुकर गए, यह उनकी मक्कारी थी जिसके जवाब में अल्लाह ने "आप कहें अल्लाह की चाल निहायत तेज़ है बेशक हमारे फ़रिश्ते उन चालों को नोट करते हैं जो तुम चलते हो" फ़रमाया। वल्लाहु आलम!

अहले अक़्ल व दानिश से अपील

"अफ़सोस है कि हमारे दानिशवरों को मुआशरती गिरावट का एहसास नहीं, जिन्हें एहसास है उन्हें इस्लाह की फ़िक्र नहीं, जिन्हें फ़िक्र है उन्हें सलीक़ा नहीं, जिन्हें सलीक़ा है उन्हें क़ुदरत नहीं, जिन्हें क़ुदरत है उन्हें फ़ुरसत नहीं, जिन्हें फ़ुरसत है उन्हें तौफ़ीक़ नहीं। तूफ़ान ख़तरे के निशान से ऊपर गुज़र रहा है मगर हम कोई हाले मस्त, कोई क़ाले मस्त का मिस्दाक़ हैं। रोम जल रहा है और नीरो बांसुरी बजा रहा है, हमारे सामने हमारा घर लुट रहा है मगर हम बड़े इत्मिनान से उसके लुटने का तमाशा देख रहे हैं। हममें हर शख़्स इस ख़्याल में मगन है कि यह बस्ती उजड़ती है तो उजड़े मेरा घर महफ़ूज़ है। क़ौम डूबती है तो डूबे मैं जूदी पहाड़ पर खड़ा हूं। मुल्क व मिल्लत की चूलें हिलती हैं तो हिलें मेरा धन्धा चल रहा है।"

मेरी गुज़ारिश यह है कि ऐ दर्दमन्दाने क़ौम! ऐ अहले अक़्ल व दानिश! ख़ुदा के लिए उठो और इस डूबती हुई क़ौम को बचाओ, अपने घर में लगी हुई यह आग बुझाओ। यह क़ौम जुनून के दौरे में अख़्लाक़ी ख़ुदकुशी कर रही है उसका हाथ पकड़ो। क़ौम की अख़्लाक़ियात का बन्द टूट रहा है, आओ सब मिलजुल कर इसकी हिफ़ाज़त करो। इस मक़सद के लिए कोई बड़ी से बड़ी कुर्बानी देना पड़े तो क़ौम को बचाने के लिए दो डालो।"

(मुआशरती बिगाड़ का सद्देबाब: ६८–६९)

हज़रत मौलाना मुहम्मद यूसुफ़ लुधयानवी (रह०)

दुनिया की हक़ीक़त-रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की निगाह में

मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) दुनिया की हक़ीक़त से वाक़िफ़ थे और उसकी बेसबाती से पूरी तरह आगाह थे। आप (स0अ0व0) ने फ़क्र को तरजीह दी, दौलत से परहेज़ किया, भूखे रहते तो सब्र करते, आसूदा रहते तो शुक्र अदा करते। नबी (स0अ0व0) ने अपनी उम्मत के लिए दुनिया के फ़ित्ने को और उसकी लज़्ज़तों और शहवतों को वाज़ेह कर दिया। कुरआन में दुनिया की हक़ीक़त को यूं बयान किया गया है:

"दुनिया की ज़िन्दगी की मिसाल ऐसी है जैसे हमने आसमान से बारिश बरसाई और उससे ज़मीन के पौधे जिसको इन्सान और जानवर खाते हैं ख़ूब उग आए यहां तक कि ज़मीन जब लहलहाने लगी अपने फूल खिलाने लगी और सज–धज गई और ज़मीन वाले समझने लगे कि अब वह उससे फ़ायदा उठाने पर क़ादिर हैं तो अचानक हमारा फ़ैसला रात या दिन में नाफ़िज़ हुआ और हमने उसको बेख़ व बुन से ऐसे साफ़ किया जैसे कल कुछ था ही नहीं। हम इसी तरह (मिसालों से) अपनी बातें साफ़–साफ़ बयान करते हैं ताकि लोग सोचें और फ़िक्र करें।" (सूरह युनूसः 24)

आप (स0अ0व0) ने दुनिया के बारे में फ़रमाया:

"बेशक दुनिया सरसब्ज़ व शादाब है और अल्लाह ने उसमें तुमको ख़लीफ़ा बनाया है ताकि तुमको देखे कि तुम क्या कर रहे हो, दुनिया से बचो, औरतों से एहतियात बरतो, बनी इस्राईल की सबसे पहली आज़माइश का सबब औरत ही बनी।"

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) जानते थे कि दुनिया उसका घर है जिसका कोई घर नहीं और जन्नत उसके लिए है जिसको दुनिया से कोई दिलचस्पी नहीं।

आप (स0अ0व0) की फ़िक्र का महवर आख़िरत थी, क्योंकि आख़िरत आप (स0अ0व0) को पसंद और महबूब थी, यही वजह है कि आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया कि मुझे दुनिया से क्या लेना–देना, मैं तो दुनिया में इस तरह हूं जैसे कोई मुसाफ़िर किसी दरख़्त के नीचे कुछ देर के लिए साया हासिल करता है और फिर उसको छोड़कर अपनी मंज़िल की तरफ़ रवाना हो जाता है। (तिरमिज़ी)

हज़रत अम्र बिन हारिस (रज़ि0) कहते हैं कि नबी करीम (स0अ0व0) ने अपनी वफ़ात के वक़्त न कोई दीनार छोड़ा और न दिरहम, न कोई गुलाम छोड़ा और न बांदी और न दुनिया से ताल्लुक़ रखने वाली कोई चीज़ सिवाए एक ख़च्चर और ज़मीन के एक टुकड़े के जिसको आप (स0अ0व0) ने मुसाफ़िरों के लिए सदक़ा कर दिया था। (बुख़ारी)

हज़रत आयशा (रज़ि0) फ़रमाती हैं कि आप (स0अ0व0) के घर में कई–कई दिन तक चूल्हा न जलता था।

हज़रत अनस (रज़ि0) बयान करते हैं कि आप (स0अ0व0) ने कभी भी मेज़ पर खाना नहीं खाया। आप (स0अ0व0) ने कभी चपाती नहीं खाई यहां तक कि आप (स0अ0व0) दुनिया से रुख़्सत हो गए। (बुख़ारी)

आप (स0अ0व0) चटाई पर बैठते थे और उसी पर सोते थे, हज़रत उमर (रज़ि0) फ़रमाते हैं कि एक मर्तबा मैं आपकी ख़िदमत में हाज़िर हुआ तो देखा कि आप (स0अ0व0) चटाई पर आराम फ़रमा रहे हैं, मैं भी वहीं बैठ गया, आप (स0अ0व0) के जिस्म पर एक तहबन्द थी, चटाई के निशानात आप (स0अ0व0) की पेशानी पर साफ़ नज़र आ रहे थे। यह देखकर मेरी आंखें भर आईं, आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया: ऐ इब्नुल ख़त्ताब! क्यों रो रहे हो? मैंने कहा: ऐ अल्लाह के नबी! मैं क्यों ने रोऊं, इस चटाई ने आपकी पेशानी पर निशानात डाल दिये हैं, क़ैसर व किसरा तो अपने बाग़ों में लुत्फ़ उठा रहे हों और आप (स0अ0व0) अल्लाह के नबी होते हुए इस चटाई पर? आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया: ऐ इब्नुल ख़त्ताब! क्या तुम्हें पसंद नहीं कि हमारे लिए आख़िरत हो और उनके लिए दुनिया। (इब्ने माजा)

मीडिया और मुसलमान

जनाब नेहाल सग़ीर

मीडिया मुसलमानों की छवि नकारात्मक रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। उसे केवल मुसलमानों में ही आतंकवाद नज़र आता है। जब कोई मुसलमान नौजवान आतंकवाद के झूठे इल्ज़ाम में पकड़ा जाता है तो मीडिया अपना रोल भूलकर जज बनने की नाकाम कोशिश करता है। लेकिन जब यही नौजवान अदालतों से बेगुनाह बरी होते हैं तो मीडिया में कोई ख़बर नहीं आती न ही ये कोई ब्रेकिंग न्यूज़ बनती है। कुछ ऐसे ही विचारों का प्रदर्शन मीडिया और मुसलमानों के मध्य "मुबाहसा" नामक चर्चा में वक्ताओं ने किया, जो मराठी पत्रकार संघ हाल मुंम्बई में हुआ था।

मीडिया और मुसलमान के संबंध और मुस्लिम समस्याओं पर राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय मीडिया का पक्षपात या आंख मूंदना अक्सर उर्दू मीडिया या मुसलमानों में चर्चा का विषय है। आज़ाद मैदान घटना जिसमें स्वतन्त्र भारत के इतिहास में पहली बार कुछ मुस्लिम नौजवानों ने पुलिस और मीडिया के विरूद्ध अपना कड़ा विरोध न केवल प्रकट किया था बल्कि मीडिया और पुलिस को उनके गुस्से का शिकार भी होना पड़ा था। पिछले 65 सालों में ये पहला मौक़ा था जब मुस्लिम नौजवानों ने अपना आपा खोया वरना आम तौर पर मुसलमान सब्र से ही काम लेता है।

आज़ाद मैदान घटना के बाद जहां मुस्लिम नेतृत्व ने धार्मिक क्रम आरम्भ किया वहीं पुलिस की ओर से बेगुनाह मुस्लिम नौजवानों को बदले का शिकार बनाया गया। ख़बरों के अनुसार अदालती हिरासत के दौरान भी नौजवानों के साथ पुलिस की बरबरता जारी रही जबकि आम राय ये है कि अदालत की हिरासत में आम तौर पर पुलिस के टार्चर से सुरक्षित हो गये। लेकिन ये एक वहम व गुमान के सिवा कुछ भी नहीं। बरसों पहले एक कश्मीरी मुस्लिम पत्रकार को केवल इस जुर्म में कि उसने कश्मीरियों के लिये मानवाधिकार की बात की थी, पर देश से ग़द्दारी का झूठा इल्ज़ाम लगाकर तिहाड़ जेल भेजा गया। जेल से रिहा होने के बाद उसने आपबीती लिखी थी जो भारतीय धर्मनिरपेक्षता का क़सीदा पढ़ने वालों को आइना दिखाने के लिये पर्याप्त है।

पुलिस के बदले के साथ ही मीडिया भी जो कि पहले ही से मुस्लिम विरोधी होने का दाग़ अपने माथे पर लिये हुए है न केवल मुसलमानों को मुजरिम साबित करने में लग गया बल्कि उसने उर्दू अख़बारों को भी सवालों के घेरे में ले लिया। आज़ाद मैदान घटना के दूसरे या तीसरे दिन इन्डिया टीवी ने एक प्रोग्राम में उर्दू अख़बारों को बढ़–चढ़ कर बोलने वाला और झूठी ख़बरों का प्रचार करने का आरोपी बना डाला।

पिछले काफ़ी अर्से से प्रिन्ट और इलेक्ट्रानिक मीडिया में एक उर्दू पत्रकार रखने की रिवायत चल पड़ी है जो उन्हें उर्दू अख़बारों की आधी–अधूरी जानकारी देता है। उपरोक्त चर्चा में भी प्रसिद्ध पत्रकारों ने उर्दू अख़बारों पर निम्न स्तरीय और सत्यता से परे ख़बरों को विशेष महत्व देने, केवल मुसलमानों ही की समस्याओं में उलझे रहने और दूसरे क्षेत्रों, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं से उन्हें कोई सरोकार न होने का इल्ज़ाम लगाया। ये इल्ज़ाम केवल आरोप मात्र ही हैं। सच्चाई से उनका कोई संबंध नहीं है। इस संगोष्ठी मे मौजूद प्रसिद्ध शिक्षाविद्य जनाब मुबारक कापड़ी साहब ने इन आरोपों का जवाब देते हुए ये कहा कि ये सरासर ग़लत हैं आप लोग उर्दू जानते ही नहीं तो फिर उर्दू अख़बार में क्या प्रकाशित हो रहा है उसकी आपको क्या ख़बर? उन्होंने पत्रकारों को सलाह दी कि वो उर्दू सीखें और उर्दू अख़बार पढ़कर उनके बारे में अपनी राय प्रकट करें। मैं समझता हूं कि ये एक सही राय है। इन्क़िलाब दैनिक के सह सम्पादक कुतुबुद्दीन शाहिद साहब ने कहा क्योंकि उर्दू अख़बार केवल मुसलमान पढ़ते हैं इसलिये मुसलमानों की समस्याओं को हम अधिक

वरीयता देते हैं। मैंने प्रसिद्ध पत्रकार जनाब हसन कमाल साहब से पूछा कि उर्दू न जानने वाले पत्रकारों के इस आरोप से आप किस हद तक सहमत हैं कि उर्दू अख़बारों को मुसलमानों के अलावा दूसरों की समस्याओं से कोई दिलचस्पी नहीं तो उन्होंने कहा कि अगर उर्दू न जानने वाले पत्रकारों की राय हमारे बारे में ऐसी है तो हमें अपने काम का निरीक्षण करना चाहिये कि हम अपने पाठकों को किस प्रकार की ख़बरें दे रहे हैं। अब वो ज़माना नहीं रहा जब हम किसी तरह की ख़बरें भी उन्हें देते थे और वो उसे स्वीकार कर लेते लेकिन आज ख़बरों के स्त्रोत इतने तेज़ रफ़्तार हैं कि हमें अपने आप में बदलाव लाने की आवश्यकता है। आज का पाठक सम्पादक से अधिक बाख़बर है, अधिक योग्य है, उन्होंने इस बात पर अफ़सोस ज़ाहिर किया कि आज तक किसी उर्दू अख़बार ने अपने पाठक को ये नहीं बताया कि थ्क् से मुसलमानों को कितना फ़ायदा या नुक़सान होगा?

श्रीमती ज्योति पिनवानी एक प्रसिद्ध अंग्रेज़ी पत्रकार हैं और अंग्रेज़ी में मुसलमानों की समस्याओं पर लिखा करती हैं। उन्होंने भी अपनी पत्रकार बिरादरी की एक प्रकार से हिमायत ही कि, उन्होंने कहा कि मीडिया आपके ख़िलाफ़ है लेकिन आप उसको साज़िश मत कहिये। ये उनकी ग़लतफ़हमी या समझ की कमी है। इसके कई कारण उन्होंने बताये उसमें से एक कारण ये है कि आज के नये पत्रकारों में ज़िम्मेदारी के एहसास की कमी है और वो जवाबदेही के भाव से अनभिज्ञ हैं। लेकिन उनकी ये बातें समझ में आने वाली नहीं हैं कि साज़िश नहीं हैं। तो भला क़ौमी व इलेक्ट्रानिक मीडिया का मुस्लिम समस्याओं पर ध्यान न देना या मुसलमानों की समस्याओं को नकारात्मक रूप से प्रस्तुत करने को और क्या कहा जायेगा? एक छोटी सी मिसाल से ही इसको समझा जा सकता है। मुम्बई में मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड का अज़ीमुश्शान जलसा हुआ जिसमें मुसलमानों की शिरकत एक अनुमान के अनुसार दो लाख से अधिक थी लेकिन क़ौमी प्रिन्ट मीडिया ने उसकी रिर्पोटिंग बहुत सीमित स्तर पर की जबकि इलेक्ट्रानिक मीडिया ने उसका पूरा बायकाट किया। इसे साज़िश नहीं तो और क्या कहा जाये? आख़िर मीडिया गुजरात को कब तक अपने बेहतर कार्य के लिये नमूने के तौर पर प्रस्तुत करता रहेगा। इसे गुजरात 2002 नज़र आता है, मुम्बई 92–93 दंगा नज़र नहीं आता? कई बातें हैं जिन्हें यहां पर बयान नही किया जा सकता।

इस चर्चा में हिन्दुस्तान टाइम्स की पॉलिटिकल एडिटर श्रीमती सुजाता आनन्द ने खुल कर बात की साथ ही उन्होंने इस बात को स्वीकार भी किया कि वो उर्दू नहीं जानती इसलिये उर्दू अख़बारो में क्या छप रहा है वो उससे बेख़बर हैं। उन्होंने भी मीडिया के प्रोपगन्डे के प्रभाव के अधीन इस्लामिस्टों के ख़िलाफ़ बात की लेकिन साथ ही उन्होंने स्वीकार किया कि उनके लेखों पर प्रतिक्रिया प्रकट करते हुए संघ के हामियों ने उन्हें बहुत गन्दी–गन्दी गालियां दीं जिनका सिलसिला अब भी जारी है लेकिन किसी मुसलमान ने आजतक प्रतिक्रिया में व्यवहारिक सीमाओं को नहीं लांघा। इसको कहते हैं जादू वो जो सर चढ़ कर बोले। मुसलमानों के चाहे कितने ही बुरे हालात हों वो सभ्यता व संस्कृति का साथ नहीं छोड़ते, जो मुसलमानों की श्रेष्ठता का स्तर रहा है। श्रीमती सुजाता ने मुसलमानों को राय दी कि अगर उनकी बातें मीडिया नज़रअन्दाज़ करता है तो आप हिम्मत न हारें अपनी कोशिशें बराबर जारी रखें। उन्होंने कहा कि आप को अगर किसी अख़बार के रवैये पर कोई शिकायत है तो आप उसके सम्पादक को बराबर ख़त लिखते रहें। सम्पादक आपकी बातों को स्वीकार करे या न करे लेकिन इसमें बदलाव आयेगा। ये एक शुभचिन्तक की सलाह है। मुसलमान इस काम में सबसे पीछे हैं। हम अपनी प्रतिक्रिया से अख़बारों के सम्पादकों को अवगत ही नहीं कराते। हमें सुजाता आनन्द के मश्वरों को दिली खुशी के साथ स्वीकार करना चाहिये। ये हमारे हित में हैं। पूरी मिल्लत के हित में हैं और सबसे बढ़कर देश के हित में हैं।

जतन देसाई एक न्यायप्रिय, असमप्रदायिक, स्वभाव के गंभीर पत्रकार हैं लेकिन उन्होंने भी सुनी सुनाई बातों पर उर्दू अख़बार के बारे में वही बातें कीं जिनकी चर्चा ऊपर हो चुकी है। हमारे लिये मुबारक कापड़ी की राय ध्यान देने योग्य है न कि मुसलमानों और मीडिया के बीच बनी गहरी खाई को दूर करने के लिये उर्दू को दूसरी ज़बानों के मीडिया हाउस तक पहुंचाना ही होगा, इसके बग़ैर इस खाई को नहीं पाटा जा सकता है।

मौलाना अली मियां नदवी (रह0)

और फ़िक्र-ए-वतन

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

मुफ़क्किर–ए–इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0) की शख़्सियत एक जामेअ व मुतवाज़िन फ़िक्र का हसीन मुरक़्क़अ थी, जिसने मुख़्तलिफ़ मैदानों में अमली तौर पर तामीरी किरदार अदा किया। तारीख़ आपका ख़ास मौज़ूअ था। इस्लाम के मद्द और जज़र का आपने गहरा मुताला किया था और क़ौमों के उरूज व ज़वाल के असबाब को समझा था। इसका नतीजा था कि आप एक कामयाब मुफ़क्किर और अज़ीम दाई थे जिन्होंने हर सतह पर तामीरे इन्सानियत का मिसाली किरदार अदा किया। आपका तबई तौर पर ख़ानदानी ज़ौक़ तस्नीफ़ व तालीफ़ था लेकिन अल्लाह तआला ने आपको ऐसा दर्दमन्द दिल अता किया था जिसे अख़लाक़ी क़द्रों की पामाली और मुल्की ज़बूंहाली को देखना गवारा न था। यही वजह है कि आपने दर्स व तदरीस और तस्नीफ़ व तालीफ़ के मश्ग़ले के बावजूद हमेशा दावती और तहरीकी ज़िन्दगी को तरजीह दी। इन्सानियत की सदा लगाई, लोगों के ज़मीर को झिंझोड़ा और ख़ासकर मुल्क हिन्दुस्तान के हुक्मरान तबक़े में बढ़ती अनारकी और यहां की समाजी, सियासी और तहज़ीबी ज़बूंहाली पर मुस्बत व हकीमाना तर्ज़ से इस्लाह का काम किया। उनके मिज़ाज व फ़िक्र को इस जुम्ले से समझें:

"ग़ैर यक़ीनी और हैजानी फ़िज़ा में कोई तस्नीफ़ी या फ़िक्री काम कैसे हो सकता है।"

(कारवान–ए–ज़िन्दगी: 2/112)

बिला शक व शुब्हा यह कहना सौ फ़ीसद बरहक़ होगा कि तामीर–ए–इन्सानियत के बाब में आपकी समाजी, मिल्ली और तहज़ीबी ख़िदमात क़ाबिले तक़लीद हैं और आपकी फ़िक्रे वतन के जज़्बे की बेहतरीन आईनादार हैं।

अंग्रेज़ी जब्र व इस्तबदाद की दास्तान तारीख़–ए–हिन्द का एक अलमनाक पहलू है, आज़ादी–ए–हिन्द के बाद इस दौर का गरचे ख़ात्मा हो गया लेकिन यह मुल्क उनकी रीशादवानियों और दसीसाकारियों से फिर भी महफ़ूज़ न रह सका। अंग्रेज़ों की अव्वलीन कोशिश यह रही कि इस मुल्क के बाशिन्दों को बाहम दस्ते गिरेबां कर दिया जाए, नफ़रत व फ़िरक़ावारियत को बढ़ावा दिया जाए और किसी भी सूरत में इस मुल्क को इक़्तिसादी, समाजी और अख़लाक़ी सतह पर बुलन्द होने का मौक़ा हासिल न हो सके। हज़रत मौलाना (रह0) की निगाहे बसीरत ने एक मुहिब्बे वतन की हैसियत से इस साज़िश और इसके संगीन मुज़र्रात को समझा और उसके तदारक की ख़ातिर अमली जद्दोजहद की। उन्होंने वतने अज़ीज़ में बढ़ती हुई बदउनवानी और गुलामाना ज़हनियत की अक्कास बातों पर खुलकर तन्क़ीद की और दो टूक अल्फ़ाज़ में अपनी बात कही कि:

"इन्सान को गुलाम बनाने के लिए बहुत सी चीज़ें हैं; इन्सान को गुलाम बनाने के लिए उसके नफ़्स की ख़्वाहिशात हैं, ज़ुल्म की मुहब्बत है, ज़ालिम से नफ़रत का न होना है, बेइन्साफ़ी का जज़्बा है, दौलत की हिस्र है, इन्सानियत का एहतराम न करना है, रुपये की हद से बढ़ी हुई मुहब्बत है, पचास बातें इन्सान को गुलाम बनाती हैं।" (इन्सानियत की मसीहाई: 31)

आज़ादी–ए–हिन्द और तक़सीम के अफ़सोसनाक

वाक़्ये के बाद इस मुल्क की सबसे बड़ी अक़्लियत यानि मुसलमान मायूसी और एहसास–ए–कमतरी का शिकार थे। दूसरी तरफ़ यहां की अक्सरियत का मुसलमानों के साथ क़ौलन व अमलन नारवा सुलूक ज़ख़्मों पर नमक छिड़कने और किसी ताज़ियाने से कम न था। इस सूरतेहाल की ख़तरनाकी और ज़हरनाकी हज़रत मौलाना (रह0) के इन अल्फ़ाज़ से ज़ाहिर होती है:

"क़ौमी ख़ुदग़र्ज़ी ने 1947ई0 में यहां के लोगों को इतना अंधा और दीवाना बना दिया कि उनसे वह ग़ैर इन्सानी अफ़आल सादिर हुए जिनकी निस्बत से चौपायों और दरिन्दों को भी शर्म आएगी और आदमख़ोर वहशियों की गर्दन शर्म से झुक जाएगी और ज़माना–ए–आइन्दा का मुअर्रिख़ इन वाक़्यात की तस्दीक़ में सख़्त पशोपेश करेगा।" (आंखों की सुईयां: 11)

बदक़िस्मती से आज़ाद हिन्दुस्तान में ख़ुदग़र्ज़ी का यह नासूर ऐसा फैला कि पूरा मुल्क फ़सादात की ज़द में आ गया, ख़ासकर जमशेदपुर और राउरकेला के फ़सादात एक आज़ाद मुल्क की तारीख़ पर एक बदनुमा दाग़ से कम नहीं, जहां का आंखोंदेखा हाल हज़रत मौलाना (रह0) ने लिखा है कि "वहां अपनी आंखों से दीवारों पर ख़ून के छापे और मैदान में इन्सानी सरों को खेतियों में खरबूज़े और तरबूज़ की तरह पड़ा हुआ देखा।" (आंखों की सुईयां: 1/502–503)

हज़रत मौलाना (रह0) ने ऐसी सूहान रूह सूरतेहाल का मुक़ाबला करने के लिए तूल व अर्ज़ के मुतअद्दिद दौरे किये। तशद्दुद पसंद और इश्तिआल अंगेज़ ज़हनियतों को अपील की और अख़लाक़ी क़द्रों को बहाल करने की भी पुरज़ोर दावत दी और यह हक़ीक़त वाज़ेह की कि:

"अगर इस तरह के वाक़्यात का सिलसिला जारी रहा और उनके रोकथाम और सद्देबाब की कोई संजीदा और मुअस्सिर कोशिश नहीं की गई तो हिन्दुस्तान में किसी तालीमी और तामीरी काम की गुंजाइश नहीं रहेगी।"

इस सिलसिले में हज़रत मौलाना (रह0) ने यह भी ज़रूरी समझा कि उनके क़ाफ़िले में अक्सरियती फ़िरक़े के ऐसे नुमाइन्दे भी ज़रूरी हैं जो इन्साफ़ पसंद और अमन पसंद हों और मुल्क की सलाह व फ़लाह के ख़्वाहां हों ताकि हज़रत मौलाना (रह0) की दिन–रात की मेहनतें ग़ैरों में महज़ अपने फ़िरक़े के तहफ़्फ़ुज़ या उनकी कमज़ोरी और बुज़दिली पर महमूल न की जाएं बल्कि उनकी जद्दोजहद को ख़ालिस एक मुहिब्बे वतन की सई पैहम तसव्वुर किया जाए।

मुस्लिम मजलिसे मुशावरत के वफ़्द के साथ हज़रत मौलाना (रह0) ने मुल्क के मुख़्तलिफ़ इलाक़ों में जो दौरे किये उनका मक़सद भी यही था कि मुल्क के बाशिन्दों में सच्ची हुब्बुल वतनी, सही इन्सान दोस्ती, इन्सानी जान–माल व इज़्ज़त व आबरू की क़द्र व क़ीमत का एहसास पैदा हो। इन दौरों से ज़मीनी सतह पर हालात किस क़द्र नार्मल हुए और ग़लतफ़हमियों का इज़ाला भी हुआ, जिसका कुछ अंदाज़ा इन अल्फ़ाज़ से होता है:

"हिन्दु–मुसलमान के इत्तिहाद का ऐसा नज़्ज़ारा भी तहरीक–ए–ख़िलाफ़त के बाद देखने में न आया होगा।" (कारवान–ए–ज़िन्दगी: 2/92)

"कुल हिन्द तहरीके पयामे इन्सानियत" (अखिल भारतीय मानवता का संदेश फ़ोरम) हज़रत मौलाना (रह0) के ज़ज़्बा–ए–फ़िक्रे वतन की हक़ीक़ी अक्कास है। जिसके मुताल्लिक़ हज़रत मौलाना (रह0) फ़रमाते हैं कि उसने ऐसाब पर तसल्लुत क़ायम कर लिया था। हज़रत मौलाना (रह0) का ख़्याल था कि किसी भी तामीरी व तालीमी कोशिश के समरआवर होने के लिए सबसे पहली ज़रूरत यह है कि मुल्क के हालात पुरसुकून और मोतदिल फ़िज़ा मयस्सर हो। हज़रत मौलाना (रह0) ने इसकी अहमियत बताते हुए फ़रमाया:

"हम सब एक कश्ती के सवार हैं, यह हमारे मुल्क की कश्ती है। अगर ख़ुदा न ख़्वास्ता डूबी तो न हमारे

इदारे बचेंगे और न कुतुबख़ाने, न मुक़द्दस और खुदारसीदा अफ़राद, न आलिम व फ़ाज़िल, न बुज़ुर्ग।" (कारवान–ए–ज़िन्दगी: 2/115)

आज़ादी–ए–हिन्द के बाद से अगरचे हज़रत मौलाना (रह0) मुसलसल अक्सरियती तबक़े के लोगों को क़रीब करने की मुफ़ीद कोशिश में लगे रहे और इसी दर्द व फ़िक्र की बुनियाद पर मुल्की व मिल्ली मसाएल पर उठने वाली हर आवाज़ की हिमायत करते रहे मगर दिन पर दिन मुल्क के हालात की अबतरी को देखकर हज़रत मौलाना (रह0) ने यह ज़रूरी समझा कि वह अपनी अख़लाक़ी सुधार की मुहिम को एक मुस्तक़िल तहरीक की शक्ल दे दें। इसीलिए 1974ई0 में इलाहाबाद से बाक़ायदा अपनी इस तहरीक का आग़ाज़ इस दर्द व फ़िक्र के साथ किया:

"बहुत इन्तिज़ार करने के बाद अपनी बे सरोसामानी, तन्हाई व बेअसरी का पूरा इल्म व एहसास होने के बावजूद हमने मैदान में आने और बिला तफ़रीक़े मज़हब व मिल्लत इस मुल्क के रहने वालों के दिलों पर दस्तक देने का फ़ैसला किया कि जब किसी मुहल्ले या गांव में आग लगती है तो कोई अपनी कमज़ोरी और बेनवाई को नहीं देखता, गूंगे चिल्ला उठते हैं और अपाहिज भी दौड़ पड़ते हैं।" (कारवान–ए–ज़िन्दगी: 2/111)

वाक़्या यह है कि हज़रत मौलाना (रह0) ने दिलों पर दस्तक देने का काम हर सतह पर अंजाम दिया। लखनऊ, सीवान, भोपाल, इन्दौर, उज्जैन, दीपालपुर, हरियाणा, चंडीगढ़, मुरादाबाद और अलीगढ़ के इलाक़ों में हज़रत मौलाना (रह0) के पुरमग़्ज़ और दर्दअंगेज़ ख़िताबात हुए। यह दौरे और ख़िताबात ख़ास तौर पर ऐसे वक़्त में हुए जब मुल्क में फ़सादात और कशीदगी की फ़िज़ा आम थी। इनका फ़ायदा यह हुआ कि हज़रत मौलाना (रह0) की फ़क़ीराना सदा का मुल्क की फ़िज़ा पर गहरा असर पड़ा और ग़ैरों के दिलों में मुसलमानों की वकअत पैदा हुई। हज़रत मौलाना (रह0) की इन ख़िताबात की अहमियत व इफ़ादियत टाटा कम्पनी के जनरल मैनेजर जो कि एक पंजाबी हिन्दु थे उनकी इस शहादत से होती है:

"आपकी तक़रीर बहुत ही बरमौक़ा थी और मुझे बहुत पसंद आई, इसी तरह की तक़रीरों की ज़रूरत है।" (कारवान–ए–ज़िन्दगी: 1/508)

यह हज़रत मौलाना (रह0) की मुल्क से सच्ची मुहब्बत ही थी कि जब आप मख़लूत इज्तिमाआत में अपना दर्दे दिल बयान करते तो बाज़ औक़ात जलसे के दौरान बिजली और माइक फ़ेल हो जाने के बावजूद भी लोगों में ज़र्रा बराबर इन्तिशार पैदा न होता बल्कि बक़ौल हज़रत मौलाना (रह0): "बाज़ देखने वालों ने बताया कि अगर मजमे में से कोई मुसलमान उठने लगता तो पास बैठा हुआ सिख या हिन्दु उसको बिठाता और कहता कि सुनो, कैसी अच्छी बातें हो रही हैं।" (कारवान–ए–ज़िन्दगी: 2/123)

हज़रत मौलाना (रह0) का ख़्याल था कि अगर मुल्क में तश्द्दुद और तनफ़्फ़ुर का माहौल क़ायम रहा, फ़िरक़ा वाराना फ़सादात की आग भड़कती रही, सियासी सफ़बन्दियां होती गईं और मुल्क के बाशिन्दों में मज़हब के नाम पर नफ़रत की दीवार खड़ी की जाती रहीं तो यह मुल्क जहन्नम कदा बन जाएगा और ऐसे माहौल में हर शहरी के लिए सांस लेना मुश्किल होगा और सच्ची हुब्बुल वतनी का जज़्बा कभी परवान नहीं चढ़ेगा। वह फ़रमाते हैं:

"अपने घर और अपने वतन का मतलब तो यह है कि इन्सान को वहां ज़्यादा आराम और ख़ुशी और अमन और आफ़ियत नसीब हो और अगर यह हासिल न हो तो लोग ऐसे वतन से क्या ख़ाक़ मुहब्बत करेंगे।" (इन्सानियत की मसीहाई: 44)

मौलाना के नज़दीक मुल्क की तामीर व तरक़्क़ी का राज़ महज़ तालीम में दिलचस्पी या इक़्तिदार का हुसूल और माल व ज़र की कसरत न था बल्कि उनके नज़दीक मुल्क की तामीर का अस्ल राज़ इन्सानी

ज़मीर का आज़ाद होना था क्योंकि जब तक इन्सानी ज़मीर गुलाम रहेगा उस वक़्त तक तमाम इन्सानी कोशिशें एक बेजान शरीर के सिवा कुछ भी नहीं। मौलाना ने एक मौक़े पर फ़रमाया:

"बाहर की गुलामी से ज़मीर की गुलामी कहीं ज़्यादा तकलीफ़देह होती है। हमने मुल्क को तो आज़ाद कराया और आज़ाद कराना चाहिये था लेकिन क़ौम को आज़ाद कराना, उसके ज़मीर को आज़ाद कराना, उसकी ब्रेनवाशिंग करना, पाक करना, उसके अन्दर से पाप की ख़्वाहिश और माल की मुहब्बत निकालना, उसकी हमने फ़िक्र नहीं की।" (इन्सानियत की मसीहाई: 32)

मौलाना के नज़दीक ख़ौफ़े ख़ुदा और सच्ची हुब्बुल वतनी का जज़्बा तामीरे इन्सानियत का पहला ज़ीना था जिसके बग़ैर तमाम तामीरी मन्सूबे और माद्दी तरक़्क़ियात नाकाम हैं। वह हिन्दुस्तानी शहरियों को यूं मुख़ातिब करते हैं:

"अगर किसी मुल्क या क़ौम में न तो ख़ौफ़–ए–ख़ुदा हो, न सच्ची हुब्बुल वतनी हो तो उसको तामीरी मन्सूबे और माद्दी तरक़्क़ियां तबाही से बचा नहीं सकतीं। अहले मुल्क इस सूरतेहाल पर ठंडे दिल से ग़ौर करें।" (इन्सानियत की मसीहाई: 49)

मौलाना के नज़दीक इन्सानी समाज की तामीर व तरक़्क़ी में अख़लाक़ व किरदार और इन्सानियत दोस्ती का बड़ा दख़ल था जिसके बग़ैर इन्सानी तामीर के ज़ाहिरी ज़राए भी नफ़ा बख़्श साबित नहीं हो सकते। वह फ़रमाते हैं:

"इन्सानियत की तरक़्क़ी माद्दी तरक़्क़ियात का नाम नहीं और महज़ नस्ले इन्सानी की तरक़्क़ी को इन्सानियत की तरक़्क़ी नहीं कहा जा सकता। इन्सानियत की तरक़्क़ी का अंदाज़ा इन्सानों के अख़लाक़ व किरदार से होता है।" (इन्सानियत की मसीहाई: 129)

हज़रत मौलाना की यही वह जामेअ और मुतवाज़िन फ़िक्र थी जिसको ख़्वास व अवाम में हर एक ने क़द्र की निगाह से देखा और अरबाबे हुकूमत ने भी वक़अत और ताल्लुक़ ख़ातिर का इज़हार किया। मौलाना का मामला यह था कि वह टकराव की पॉलिसी अख़्तियार करने के बजाए हर मौक़े पर इफ़्हाम व तफ़हीम से काम लेते थे और जहां तक इस्लामी अक़ाएद व आमाल पर ज़द न पड़ रही हो, रवादारी बरतते थे। यही वजह है कि अक्सर नाज़ुक़ व हस्सास मुल्की मसाएल में आप ही की शख़्सियत सालिसी का किरदार अदा करती थी और अहले हुकूमत भी हर मसले में आप ही की राय को अहमियत देते थे। इस सिलसिले में उनके हक़ीक़ी जानशीन मुरशिदुल उम्मत हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबेअ हसनी नदवी (रह0) की शहादत मुलाहिज़ा हो:

"मौलाना के मुताल्लिक़ ख़ैरख़्वाहाना और सुलहजो होने का तसव्वुर मुसलमानों से बढ़कर मुल्क के ग़ैर मुस्लिमों में भी फैल गया था।" (अहद साज़ शख़्सियत: 207)

फ़िक्रे वतन के उनवान से हज़रत मौलाना (रह0) का सच्चा जज़्बा हिन्दुस्तानी वुज़्रा–ए–आज़म से मुलाक़ातों में भी साफ़ नज़र आता है। उन्होंने इन्दिरा गांधी को अपनी मुलाक़ातों में यह नसीहत की कि हर शहरी के साथ मुन्सिफ़ाना सुलूक अख़्तियार करना मुल्क की हक़ीक़ी ख़ैरख़्वाही है। जब वह राजीव गांधी से मिलते तो उन्हें भी मुल्क की सालिमियत के हक़ाएक़ की तरफ़ तवज्जो दिलाते। नरसिम्हाराव के दौरे इक़्तिदार में भी हज़रत मौलाना (रह0) ने उनसे बड़े जुर्रतमंदाना लहजे में यही कहा कि इस मुल्क के सुपर पॉवर बनने के लिए ज़रूरी है कि यहां के लोग आला अख़्लाक़ से आरास्ता हों। इसी तरह आख़िरी बीमारी के दिनों में अटल बिहारी वाजपेई नदवा आए तो उनसे भी यही फ़रमाया कि: मुल्क को बचाइये, मुल्क बड़े ख़तरे में है, माल व इक़्तिदार की मुहब्बत ने तमाम इक़्दार को पसेपुश्त डाल दिया है, मुल्क को बचाइये।" (अहद साज़ शख़्सियत: 204)

मुहिब्बीन व मुत्तबिईन-ए-रसूल (स०अ०व०) के लिए लम्हा-ए-फ़िक्रिया

"आप कहते हैं कि आपके रसूल की सीरत सबसे ज़्यादा पाक व पाकीज़ा, सुनहरी और रोशन, बेलौस व बेदाग़ है और रास्ती विरासतबाज़ी, अमानत व दयानत, हिल्म व उफ़ू, सब्र व तहम्मुल, फ़य्याज़ी व हमदर्दी, नर्मी व लीनत व शफ़क़त व रहमत, ज़ोहद व तक़्वा, पारसाई व पाकबाज़ी, नेकी व नेक नफ़्सी, ईसार व बेनफ़्सी, हर सिन्फ़ अख़्लाक़, हर शोबा रूहानियत के जौहरे कमाल और इन्तिहाए कमाल पर सवाल यह है कि मुनकिर से इसका इक़रार क्यों कराइयेगा? जिसने अब तक आपके रसूल को न जाना है, न पहचाना है और इसीलिए न माना है, वह आख़िर क्यों जानने, पहचानने और मानने लगे?

क्या आप ईसाईयों से तवक्को रखते हैं कि वह रसूलुल्लाह (स०अ०व०) के फ़ज़ाएल व अख़्लाक़ की तलाश में कलाम–ए–मजीद की तिलावत शुरू कर देंगे? क्या आप हिन्दुओं से यह उम्मीद रखते हैं कि वह देवबन्द के शेख़ुल हदीस की ख़िदमत में आकर बुख़ारी व मुस्लिम, तिरमिज़ी व अबूदाऊद का दर्स लेने लगेंगे? क्या आपका यहूदियों के बारे में यह ख़्याल है कि वह उन जवाहिर पारों की जुस्तुजू में मुस्नद अहमद व तबक़ात इब्ने साद, तारीख़े तिबरी और सीरत इब्ने हिशाम की वरक़ गरदानी अख़्तियार करेंगे? क्या आपको सिख, जैन और बुद्ध मज़हब के पैरोकारों से यह उम्मीद है कि वह सीरते नबवी (स०अ०व०) के वाक़्यात से बाख़बर होने की चाट में आपके यहां की मीलाद की महफ़िलों में शरीक हुआ करेंगे? या आपकी मस्जिदों में मेम्बरों के क़रीब बैठ–बैठ कर आपके वाइज़ों की तक़रीरें सुना करेंगे? क्या आपको किसी ग़ैर मुस्लिम से इस ज़ौक़ व शौक़, इस तलब व तफ़्तीश, इस तलाश व तहक़ीक़ की तवक़्को है?

यक़ीन रखिये और बिला शक व शुब्हा यक़ीन रखिये कि कोई ग़ैर मज़हब वाला आपके यहां की किताबों को उलट–पलट इस ग़रज़ से नहीं करेगा। वह आपकी लिखी हुई किताबों को नहीं, ख़ुद आपको पढ़ेगा। वह मुताला किताबों का नहीं, ज़िन्दा किताबों का करेगा। दरख़्त के बीज को उसके फल से पहचाना जाता है, तुख़्म की तहक़ीक़ के लिए कोई माहिर बाग़बान के पास नहीं जाता। रसूलुल्लाह (स०अ०व०) की सीरत का अंदाज़ा उम्मत की हालत से किया जाता है और किया जाएगा। अब इरशाद हो और इरशाद किसी दूसरे से नहीं, ख़ुद अपने ही दिल से इरशाद हो कि आपकी ज़िन्दगी, आपका तर्ज़े अमल, आपका किरदार, आपकी आदतें ख़सलतें, आपके मश्ग़ले और दिलचस्पियां, आपका मज़ाक़े तबियत, आपकी सीरत, मुनकिरों के दिल में आपके रसूले पाक (स०अ०व०) के बारे में क्या राय क़ायम कराएगी? दूसरे अगर बेबसी की वजह से इस नूरे मुजस्सम (स०अ०व०) से इनकार कर रहे हैं तो कहीं ख़ुदा न करे आप तो उनके जुर्म में मदद के मुजरिम नहीं बन रहे हैं।" (सच्ची बातें: १६५–१६७)

मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी (रह०)

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 10 | October 2023 | Volume: 15

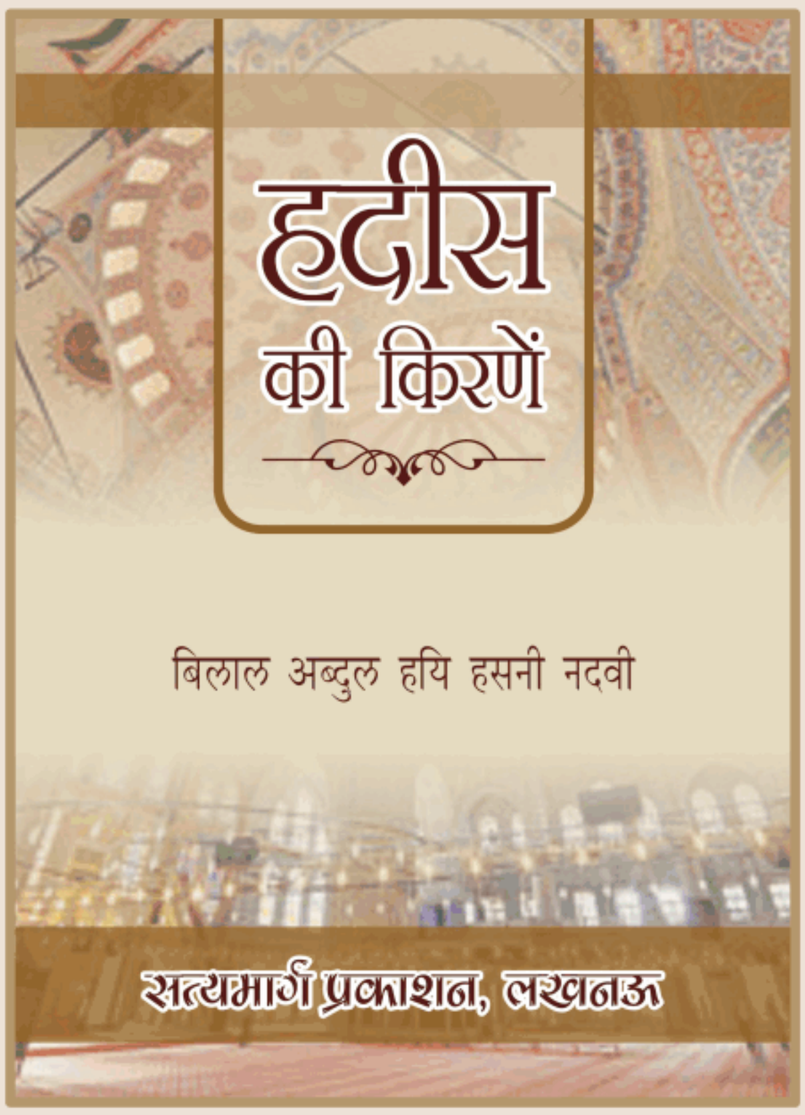

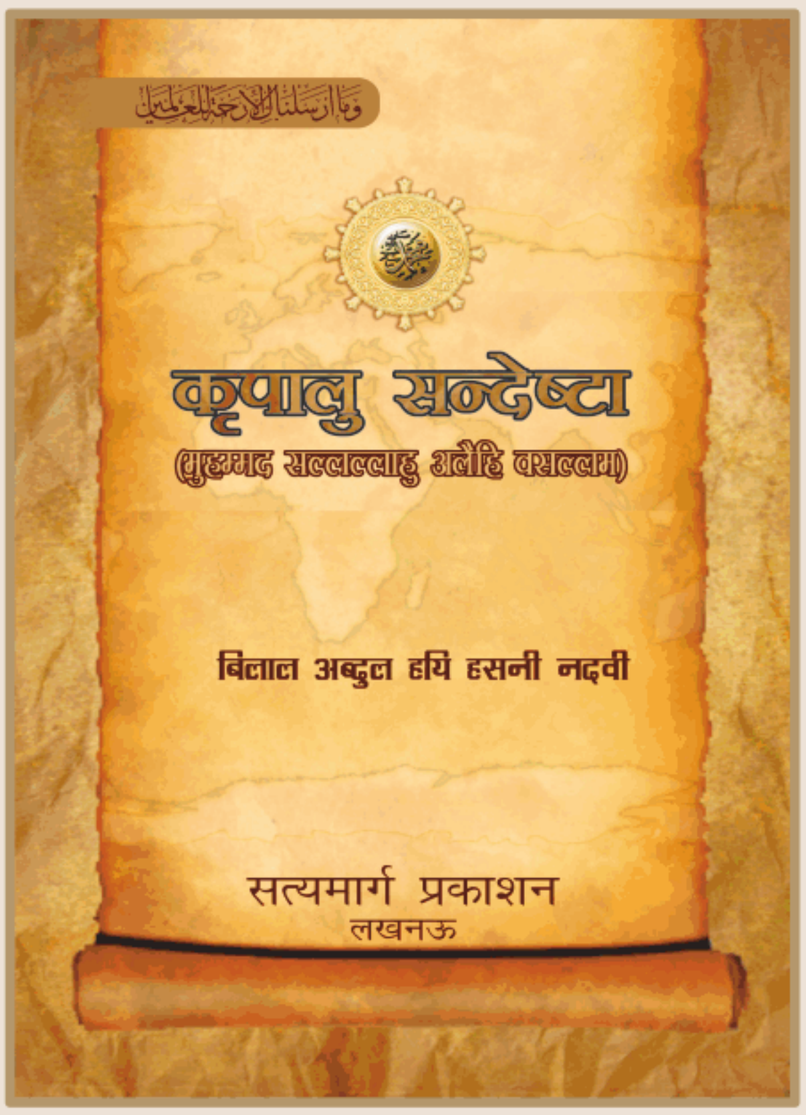

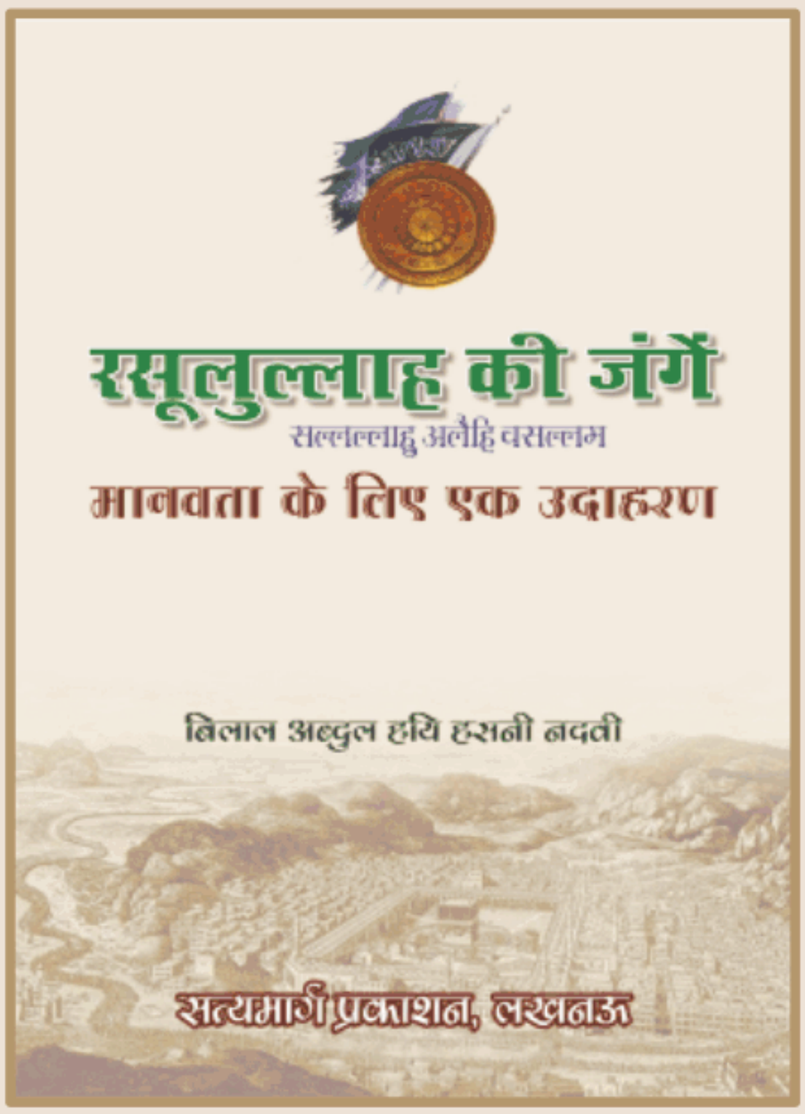

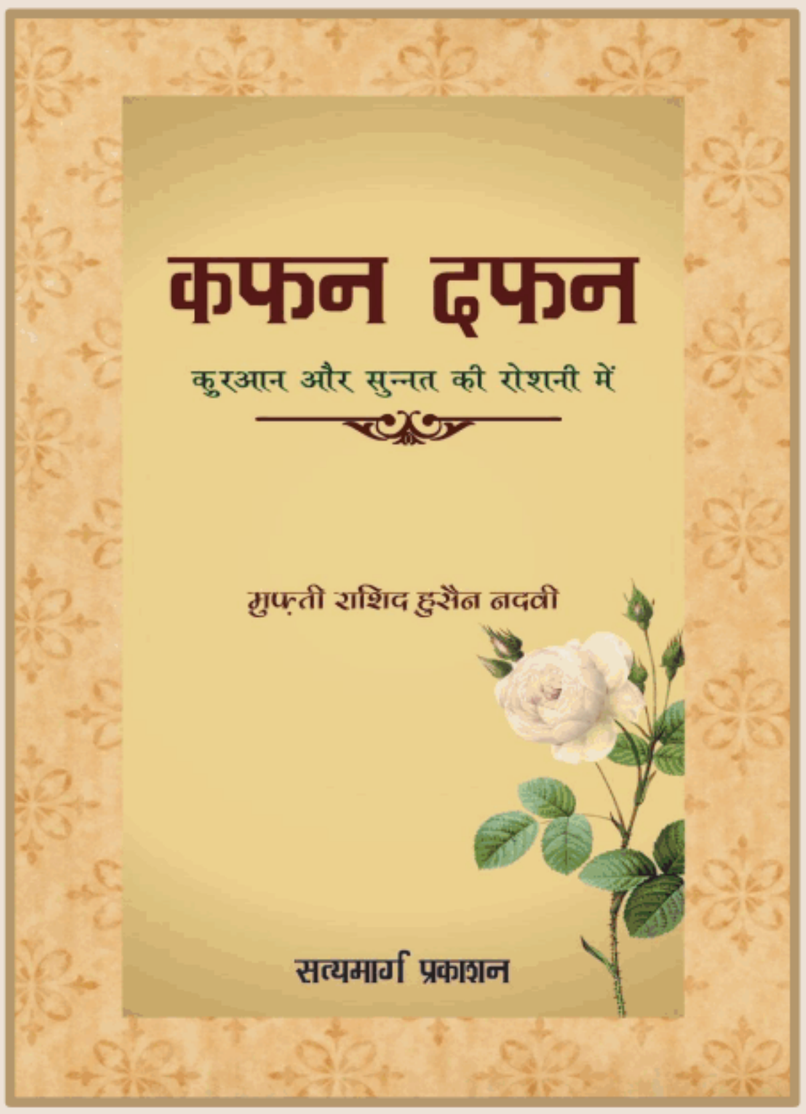

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.